—द्विजेन्द्रलाल राय

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकरका ३२ वाँ ग्रन्थ

शाहजहाँ

सुप्रसिद्ध नाटककार

स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल रायके

वंगला नाटकका अनुवाद

अनुवाद-कर्त्ता

पण्डित रूपनारायण पाण्डेय

प्रकाशक

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय
हीराबाग, बम्बई नं. ४

By SL. & L.

आठवाँ संशोधित संस्करण

जून, १९४६

मुद्रक—
दी ओरियण्ट प्रिंटिंग हाउस,
नवीवाड़ी बम्बई, २

समालोचना

(बंगला 'साहित्य' में प्रकाशित श्री नवकृष्ण घोषके लेखका अनुवाद)

ऐतिहासिक नाटकोंके लिखनेमें बड़ी भारी कठिनाई यह है कि यदि इतिहासकी रक्षा की जाती है तो कल्पनाको दबाना पड़ता है और यदि कल्पनाकी गतिमें रुकावट डाली जाती है तो नाटक अच्छा नहीं बनता। इसलिए किसी सुपरिचित ऐतिहासिक चरित्रका अवलम्बन करके श्रेष्ठ श्रेणीके नाटककी रचना करना बहुत ही कठिन कार्य है। एक बात और भी है और वह यह कि नाटकका प्रधान पात्र पवित्र और उन्नत होना चाहिए। इसके बिना उच्च श्रेणीका नाटक नहीं बन सकता; क्योंकि, कवि अपने हृदयकी बात,--अन्तर्जीवनका गंभीर तत्त्व,--नाटकके प्रधान पात्रके ही कण्ठसे कहलवाता है। यदि प्रधान पात्र अपवित्र या अवनत हो, तो कविको ऐसा करनेका अवसर नहीं मिलता। अपात्रके द्वारा यदि वह अपने हृदयकी बात कहलवाता है, तो वह अस्वाभाविक जान पड़ती है। कविवर शेक्सपियरने अपने मनोराज्यकी उच्च श्रेणीकी बातों और मानव-हृदयके गंभीर तत्त्वोंको भावुक हेम्लेट और पागल लियरके मुँहसे प्रकट किया है; परन्तु, कृतघ्न और घातक मेकबेथके मुँहसे वे ऐसी बातें नहीं कहला सके। जीवनकी जिस नीची और पापपूर्ण सीढ़ीपर मेकबेथ खड़ा था, उसपरसे मनकी पवित्र और उन्नत सीढ़ीपर उठाकर रखनेकी शक्ति उनमें भी नहीं थी। नाटक-भरमें केवल तीन ही बार मेकबेथके शोकसंतप्त मस्तिष्कमेंसे कविने उसके विना जाने अपने मनकी बातें कहला पाई हैं। इसी कारण, जब मेकबेथ नाटककी लियर और हेम्लेटके साथ तुलना की जाती है, तब वह उच्च श्रेणीके नाटककी दृष्टिसे निकृष्ट जान पड़ता है। यह बात दूसरी है कि स्टेजपर खेले जानेकी दृष्टिसे वह श्रेष्ठ नाटक है।

शाहजहाँ प्रसिद्ध ऐतिहासिक पुरुष है। उसकी जीवनी महत्, पवित्र या आदर्श चरित्रके अनुकूल नहीं है, इस बातको द्विजेन्द्रबाबू जानते थे और इसीलिए उन्होंने शाहजहाँ नाटकको उच्च श्रेणीके श्रव्य काव्यके रूपमें नहीं, किन्तु, दृश्य

नाटकके रूपमें स्टेजपर खेले जानेके लिए लिखा है । सबसे पहले यह देखना चाहिए कि इस नाटकके पात्रोंको स्टेजपर अभिनय करनेके योग्य बनानेमें कवि इतिहासकी रुकावटोंको कहाँ तक हटा सका है ।

नाट्यकारने शाहजहाँको वृद्ध, सन्तानस्नेहप्रवण, कोमलप्राण, शांतिप्रयासी और क्षमाशीलके रूपमें चित्रित किया है। प्रत्येक दृश्यमें शाहजहाँके चरित्रका विकास होता गया है । उसकी छवि सर्वत्र ही उज्ज्वल और सुंदर है । उससे जब अपने विद्रोही पुत्रोंका शासन करनेके लिए अनुरोध किया जाता है, तब वह कहता है, "मेरे ये बेटी-बेटे बे-माँके हैं। उन्हें किस जीसे सजा दूँ, जहानारा! वह देख, उस संगमरमरके बने हुए (लंबी साँस लेना) उस ताजमहलकी तरफ़ देख और फिर उन्हें सजा देनेके लिए कह।" यहाँ उसके संतान-स्नेहकी गंभीरता देखकर मुग्ध हो जाना पड़ता है। उसकी प्यारी बेगम मुमताजके प्रति जो उसकी जीवन-व्यापिनी ममता थी, उसका स्मरण हो आता है, ताजमहलके मंत्रपूत उच्चारणसे उसके अक्षय और अपूर्व स्थापत्य कीर्ति-कलापकी याद आ जाती है। और आगरेके किलेके अतुल शोभामय द्वारपरसे यमुनातटपरके ताजमहलका दृश्य देखते देखते उसके सदाके लिए सो जानेकी कवित्वमय मृत्यु-कहानी भी हृदयपटपर लिख जाती है। जब औरंगजेबकी आज्ञासे अपने कैद हो जानेकी बात सुनकर शाहजहाँ निष्फल क्रोधसे गरज उठता है, कहता है कि "तुमने सोचा है, यह शेर बूढ़ा है इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा! मैं बूढ़ा शाहजहाँ हूँ सही, लेकिन मैं शाहजहाँ हूँ! ऐ कौन है? ले आओ मेरा ज़िरहबख्तर और तलवार!" तब उसके अहमदनगरादिके विजय करनेकी वीरकहानियाँ स्मरण हो आती हैं और उस पञ्जरबद्ध जराजर्जर केसरीकी व्यर्थ गर्जनासे हृदय चंचल हो उठता है। जिस समय दाराके पराजयकी और औरंगजेबके दिल्लीमें मयूर-सिंहासनपर आसीन होनेकी खबर सुनकर शाहजहाँ एक बार किलेके बाहर जाकर प्रजाके सामने पहुँचनेके लिए व्यग्र हो उठता है, उस समय उसके सुशासनकी, प्रजावात्सल्यकी, न्याय-विचारकी और राज्यमें चोरों-डकैतोंसे रहित अभूतपूर्व शांति-स्थापन करनेकी बातें याद आ जाती हैं और उसकी दुरवस्थासे मन करुणार्द्र हो जाता है। दाराकी हत्या रोकनेके लिए जब वह आगरेके किलेके ऊपरसे कूद पड़नेके लिए तैयार होता है और फिर दाराकी हत्याके समाचारसे उन्मत्तवत् होकर क्षमावर्ती धरतीपर शापकी वर्षा करता है, उस समय उसके दुर्वह शोकका अनुमान करके हृदय व्याकुल हो उठता है । और अन्तमें जब

अपने सारे दुःखोंके कारणभूत औरंगजेबको उदास, मलीन और दुर्बल-देह देखकर वह उसके सारे अक्षम्य अपराधोंको क्षमा कर देता है, तब उसके हृदयमें संतान-स्नेहकी प्रबलता कितनी अधिक है, यह देखकर मन विस्मयाभिभूत जाता है।

पर जब इतिहासकी बात सोची जाती है, तब शाहजहाँकी यह सुन्दर छवि मलिन हो जाती है। पितासे द्रोह करना और सिंहासन प्राप्त करनेके लिए भाइयों-से युद्ध करना, यह मुगल बादशाहोंकी परम्परागत रीति थी। इसमें नूतनता कुछ भी नहीं थी। स्वयं शाहजहाँने ही अपने पिताके विरुद्ध दो बार शस्त्र धारण किया था और उसके पिता जहाँगीरने तो मौतकी सेजपर सोये हुए बादशाह अकबरके विरुद्ध विद्रोहका झगड़ा खड़ा किया था। मेरी मृत्युके बाद सिंहासनके लिए पुत्रों-में झगड़ा अवश्य होगा, यह जानकर ही तो शाहजहाँने दाराको अपने पास रख लिया और शेष तीन पुत्रोंको सूबेदार या राजप्रतिनिधि बनाकर अन्य प्रान्तोंमें भेज दिया था। इन सब बातोंपर जब विचार किया जाता है, तब पुत्रोंकी बगावत-का हाल सुनकर शाहजहाँके मुँहसे "देखूँ सोचता हूँ,—मगर ऐसा कभी सोचनेकी आदत ही नहीं है।" आदि वाक्य असंगत और बनावटी जान पड़ते हैं। विद्रोही पुत्रोंको दमन करनेका अनुरोध किये जानेपर जब वह कहता है —"खुदा, बापोंको यह मोहब्बतसे भरा हुआ दिल क्यों दिया था? उनके दिलों और जिगरोंको लोहेका क्यों नहीं बनाया?" तब यह सोचकर उसपर दया हो आती है कि उसे यह ज्ञान जवानीमें क्यों नहीं हुआ। जब इतिहास कहता है कि उसने अपने बड़े भाईके पुत्रको चतुराईसे प्रतारित करके और दूसरे भाइयों तथा भतीजोंमेंसे जो जो उसके सिंहासनके प्रतिद्वन्द्वी हो सकते थे, उन सबको ही बिना कुछ सोचे-विचारे मारकर अपने कुटुम्बियोंके रक्तसे रँगे हुए हाथोंमें दिल्लीका राजदण्ड धारण किया था, तब उसके मुँहसे "या खुदा, मैंने ऐसा कौन-सा गुनाह किया है," यह उक्ति जगदीश्वरके सामने सर्वथा निर्लज्जतापूर्ण जान पड़ती है। मेनुसी(Signor Manouici) की बात यदि सत्य हो, तो शाहजहाँकी निष्ठुरताको बहुत ही आश्चर्यजनक कहना होगा। मेनुसी लिखता है कि शाहजहाँने अपने भाई शहर-यार और उनके दो निरीह पुत्रोंको एक कोठरीमें कैद करके उसका द्वार बन्द करा दिया जिससे कि वे तीनों कई दिनोंमें भूखसे छटपटाकर मर गये! मेनुसी शाहजहाँके व्यभिचारकी, गुप्त हत्याओंकी और इन्द्रिय-सेवाकी जो सब बातें

लिख गया है, यदि उनका थोड़ा-सा अंश भी सच हो तो यह स्वीकार करना पड़ेगा कि उसे बुढ़ापेमें जो पुत्र-शोक सहन करना पड़ा, कैदका दुख भोगना पड़ा, सो सब उसके पापोंका उचित प्रतिकार था।

शाहजहाँके इतिहासके साथ लियरकी कहानीका कुछ सादृश्य है। दोनों ही राजा हैं, जराग्रस्त हैं, राजभ्रष्ट हैं और सन्तानोंके निष्ठुर व्यवहारसे दुखी हैं। द्विजेन्द्र बाबूने शाहजहाँको लियरकी ही दशामें लाकर खड़ा किया है और शाहजहाँका हृदय भी लियरके समान कोमल और सहज ही विक्षुब्ध होनेवाला बनाया है। परन्तु लियरके आदर्शपर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया। इसका कारण नाट्यकारकी चतुराईकी कमी या असामर्थ्य नहीं; किन्तु, इतिहास है। यह सच है कि पुत्रोंके, विशेषतः औरंगज़ेबके दुर्व्यवहारसे और दाराकी हत्यासे शाहजहांके हृदयपर गहरी चोट लगी थी: परन्तु, धीरे धीरे समय बीत जानेपर उसके हृदयका वह घाव सूख गया था और वह प्रकृतिस्थ हो गया था। उसकी हालत ज्योंकी त्यों हो गई थी। किन्तु कृतघ्न कन्याओंके पैशाचिक आचरणसे लियरका हृदय जो टूट गया, सो उसमें फिर जोड़ नहीं लगा और कार्डेलियाकी मृत्युकी अन्तिम चोटसे तो वह सर्वथा चूर-चूर हो गया। लियर नाटकके पहले तीन अंकोंके बड़े बड़े दृश्य क्षोभ, रोष, विस्मय, अनुताप, करुणा आदिकी हलचलसे मनको उथल-पुथल कर डालते हैं; परन्तु शाहजहाँ नाटकमें इस प्रकारके किसी दृश्यका समावेश नहीं हो सका है। मुहम्मदको छोड़कर विद्रोही पुत्रोंके पक्षके अन्य किसी पात्रके साथ शाहजहाँका साक्षात् नहीं हुआ और मुहम्मदने भी सिवा यह कहनेके कि 'अब्बाके हुक्मसे आप कैद हैं' शाहजहाँसे न तो कोई बुरा शब्द कहा और न निष्ठुर व्यवहार ही किया। अन्तिम दृश्यमें नाट्यकारने शाहजहाँके साथ औरंगज़ेबका जो काल्पनिक साक्षात् कराया है, वह विद्रोह हत्या आदिकी घटनाओंके बहुत वर्ष पीछेका है। उस समय शाहजहाँके नामका ताप शीतल हो गया था। लियरने कार्डेलियाको वंचित करके अपनी दोनों अत्याचारिणी कन्याओंको सर्वस्व दान कर दिया था, किन्तु शाहजहाँने दाराको वंचित करके औरंगज़ेबको सर्वस्व दान नहीं किया था। अतएव औरंगज़ेबके ऊपर आदान-प्रदान सम्बन्धी कृतघ्नताका दोष नहीं आया। औरंगज़ेबने रिगन और गनेरिलके समान अपने पिताके ऊपर न तो मर्मभेदी वाग्बाणोंकी वर्षा की और न उसे कोई कष्ट दिया। इसके

सिवा शेक्सपियरने गनेरियल और रिगनके काल्पनिक चरित्रकी कालिमा बहुत ही गहरी करके दिखलाई है परन्तु द्विजेन्द्रलालने औरंगज़ेबके ऐतिहासिक चरित्रके ऊपर इच्छानुसार उस प्रकारकी स्याही नहीं पोती है। यदि वे ऐसा करते तो इतिहासका अपलाप होता और औरंगज़ेबके वास्तविक चरित्रके प्रति अविचार भी किया जाता। किन्तु स्याही न पोतनेका फल हुआ है यह कि उत्पीडनके प्रति उदासीनता उत्पन्न न होकर सहानुभूतिका उद्रेक हुआ है और उत्पीडित शाहजहाँके कष्टकी तीव्रता घट गई है। शाहजहाँको भी नाटयकारने लियरके समान बाह्य जगत्‌की आँधीके साथ अन्तरकी झञ्झावायुके प्रकोप-को मिलानेका अवसर दिया है। किन्तु, दोनोंमें अन्तर यह है कि रातके गहरे अँधेरेमें आश्रयहीन और पथभ्रष्ट हुए लियरके मस्तकपरसे तो आँधी भर निकल गई थी पर शाहजहाँने तो आगरेके महलकी संगमरमरकी जालियोंमेंसे यमुनाके ऊपर जो आँधी-पानीका खेल हो रहा था उसे देखा था। दोनोंके वंशगत और शिक्षागत चरित्रमें भी एक-सा अन्तर है। ऐसी दशामें नाटयकारके हाथमें कोई उपाय नहीं था। इतिहासने उनकी काव्य-कल्पनाको सैकड़ों रस्सियोंसे बाँध रक्खा था, अतः उसे ऊर्ध्वगामी नहीं होने दिया,—लियरके आदर्शपर शाहजहाँ नहीं पहुँच पाया।

लियर नाटकमें अकेले लियरने ही प्रधानतः कष्ट पाया है; परन्तु शाहजहाँ नाटकका उत्पीडन कई भागोंमें विभक्त हो गया है। जान पड़ता है, दाराने ही उसका सबसे अधिक क्लेश भोगा है और उसीके भाग्यविपर्ययपर सबसे अधिक चित्तवृत्ति और सहानुभूति आकर्षित होती है। दारा धर्ममतमें उदार, अकपट और वीर था; किन्तु कूटबुद्धि और कर्मपटुतामें औरंगजेबके साथ उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती थी। इतिहासके इस चित्रने नाटकमें भी स्थान पाया है। दाराके भाग्यके उलट-फेरकी छवि नाट्यकारने बहुत ही निपुणताके साथ उज्ज्वल-रूपमें अंकित की है। दाराको भी नाटककारने पत्नी-गत-प्राण और सन्तान-स्नेह-विगलित-हृदय बनाया है। मरुभूमिमें स्त्री पुत्रोंके असह्य कष्ट देखकर जब वह उन्मत्तप्राय हो जाता है और अपनी प्यारी स्त्रीकी हत्या करनेको तैयार होता है, उस समयका चित्र भीषण होनेपर भी उसके चरित्रसे ठीक मेल खाता है। इतिहास कहता है कि वह अधीर और असहिष्णु था। नादिराकी मृत्यु जिस कमरेमें हुई थी, उस कमरेमें नीच जिहनखाँके सामने सिपरको रोते देखकर दारा जब रूखे स्वरसे 'सिपर!'

कहकर उस बालककी दुर्बलता स्मरण करा देता है, तब दाराके आत्मसम्मान-ज्ञानका बहुत ही सुन्दर चित्र खिंच जाता है ।

दारा उत्पीडित और औरंगज़ेब उत्पीडक है । दाराके दुःखसे सहानुभूतिके उद्रेकके साथ साथ औरंगज़ेबपर घृणा होना स्वाभाविक है । किन्तु नाटकमें औरंगज़ेबका चरित्र जिस रूपमें चित्रित किया गया है, उससे उक्त घृणा जितनी चाहिए उतनी नहीं बढ़ती । दाराको मृत्युदण्ड देते समय इतस्ततः करना, दाराकी मृत्युपर दुःख प्रकट करना और जिहनखाँके मरनेकी बात सुनकर संतोष प्रकाशित करना, ये सब घटनायें इतिहाससंगत हैं, या नहीं यह दूसरी बात है; परन्तु, नाटकमें वे औरंगज़ेबकी आंतरिक अनुभूतिके रूपमें वर्णित हुई हैं और इसके फलसे नाटकीय सौन्दर्यकी अवश्य ही कुछ क्षति हुई है । उधर, नाट्यकारने दाराके चरित्रके दोषोंको प्रच्छन्न रखकर उसे दर्शकों और पाठकोंकी सहानुभूति प्राप्त करा दी है । दारा दाम्भिक था, वह बादशाहका प्रतिनिधि बन गया था, इस कारण उसकी उद्धतता बढ़ गई थी । वह प्रतिवादको ज़रा भी सहन नहीं कर सकता था और अमीर उमराका बिना कारण अपमान किया करता था । मेनुसी लिखता है कि दारा अपने एक खरीदे हुए गुलाम 'अरब खाँ' के साथ उन लोगोंकी तुलना किया करता था और उनका मजाक उड़ाया करता था । संगीतकलानुरागी अम्बरनरेश जयसिंहका वह 'उस्तादजी' कहकर उपहास किया करता था। वह क्रिश्चियन उपपत्नियोंपर बहुत ही अनुरक्त था और इस विषयमें बदनाम हो गया था कि उसने शाहजहाँके वर्द्धित-प्रताप मंत्री सादुल्लाखाँको विष देकर मार डाला । इन्हीं सब कारणोंसे वह विपत्तिके समय अमीर उमराकी सहायता नहीं प्राप्त कर सका ।

नाट्यकारने औरंगज़ेबका जो चित्र खींचा है, वह एक बड़े भारी पुरुषार्थका चित्र है । नाट्यकारने बहुत ही सावधानी और आंतरिक सहानुभूतिसे इस चरित्रको परिस्फुट किया है और यह बात प्रत्येक रसज्ञको स्वीकार करनी होगी कि उनका यह प्रयत्न सर्वतोभावसे सफल हुआ है । तीक्ष्णबुद्धि, दूरदर्शिता, कार्यतत्परता, विपत्तिमें धैर्य, आत्म-दमनका सामर्थ्य आदि औरंगज़ेबके गुण उसके प्रति स्वयं ही श्रद्धाको आकर्षित कर लेते हैं । औरंगज़ेबके महान् चरित्रके साथ तुलना करनेसे उसके भाइयोंका चरित्र बिल्कुल ही तुच्छ जान पड़ता है । उसकी राजनीतिक बुद्धिके साथ प्रतिद्वन्द्विता करनेमें वे बच्चोंके समान सर्वथा असमर्थ थे, यह बात नाटकमें स्पष्टतासे दिखलाई देती है ।

अन्यान्य पात्रोंके समान औरंगजेबके चरित्रके दोषोंको भी नाट्यकारने, जहाँ तक बना है, अंतरालमें ही रक्खा है। किन्तु, दोष इतने गुरुतर हैं कि सैकड़ों चेष्टाओंसे भी उनकी कालिमा नहीं धुल सकती। यह बात नहीं है कि औरंगजेब केवल शठके प्रति शाठ्य करता था। नहीं, वह अपनी कार्य-सिद्धिके लिए आवश्यकता पड़नेपर जो शठ नहीं है उसके भी साथ शठता या धूर्तता करता था। यह बात नाटकमें भी प्रकाशित हुई है। जहानाराके उकसानेसे मुरादने जिस समय उसे बंदी बनानेका षड्यंत्र रचा था, उससे बहुत पहले उसने मुरादको 'सम्राट्' कहकर और अपने आपको 'मक्का जानेवाला फकीर' बतलाकर उसको प्रतारित किया था। वह निष्ठुर था, उसका आभास भी नाटकमें मौजूद है। उसने दारा और सिपरको एक बहुत ही दुबले पतले हड्डियाँ निकले हुए हाथीकी पीठपर मैले कपड़ोंकी पोशाक पहनवाकर दिल्लीके चारों तरफ घुमाया था। वह बड़ी भीषण निष्ठुरता थी। बर्नियर लिखता है कि दाराको मृत्युका दण्ड देनेके समय औरंगज़ेबने जो दुःख प्रकाशित किया था, वह उसकी कूटबुद्धिका केवल एक अभिनय था। मेनुसी लिखता है कि जब उसे दाराका कटा हुआ सिर मिला, तब वह हर्षसे फूल गया, तलवारकी नोकसे उसने उसकी एक आँख निकाल डाली, दाराकी एक आँखमें काले रंगका जो एक दाग था उसकी परीक्षा की, और फिर शाहजहाँके भोजनके समय उसने उस सिरको एक बकसमें रखकर और वस्त्रसे ढककर भेट-स्वरूप भेज दिया। औरंगज़ेबके चरित्रके काले हिस्सेको प्रकट न करके नाट्यकारने अच्छा ही किया है। और और चरित्रोंमें भी उन्होंने गुणोंपर ही प्रकाश डाला है। इस विषयमें औरंगजेबके चरित्रके प्रति सहानुभूति होनेके कारण कोई खास पक्षपात नहीं किया गया है। उन्होंने औरंगज़ेबके जटिल चरित्रके परस्पर-विरुद्ध भावोंका स्वभावोचित रूपमें सुन्दर समन्वय कर दिया है। औरंगज़ेबने जिस राजनीतिक प्रतिभाके बलसे भारतका साम्राज्य हस्तगत किया था वह अच्छी तरह स्पष्टतासे, और मनकी जिस संकीर्णताके दोषोंसे मुगल-साम्राज्यवादके नष्ट होनेकी व्यवस्था की थी, वह एक दूरवर्ती तारेकी भाँति कुछ अस्पष्टतासे, नाटकमें झलकती है।

मुरादको नाट्यकारने साहसी, वीर, सुराप्रिय और वेश्यासक्तके रूपमें चित्रित किया है। इतिहास भी यही कहता है। मुराद पेटू और शिकारी प्रसिद्ध

था और यदि वह सम्राट् होता तो मुसलमान धर्मकी कोई हानि न होती: क्योंकि वह मुसलमान धर्ममें अन्धश्रद्धा रखता था, यह बात भी इतिहासमें लिखी है। वह औरंगजेबसे ठगा गया था, अतएव यह निश्चित है कि उसकी बुद्धि औरंगजेबके समान तेज नहीं थी। नाट्यकारने अपने चित्रमें मुरादकी निर्बुद्धिताका रंग कुछ गहरा भरा है, पर इससे नाटकके सौन्दर्यमें कोई क्षति-वृद्धि नहीं हुई।

शुजा साहसी और युद्धप्रेमी था और युद्धक्षेत्रकी विभीषिकाके भीतर भी वह नृत्यगीतमें मस्त रहता था। यह बात इतिहाससे मिलती है। ऐतिहासिकोंका मत है कि वह घोर विलासी और अतिशय व्यसनासक्त था: परन्तु, नाट्यकारने उसे पत्नीगतप्राण, सरलचित्त, उन्नतमना और भावुकके रूपमें चित्रित किया है।

मुहम्मद पहले पिताका आज्ञानुवर्ती था, पीछे वंशपरम्पराकी प्रथाके अनुसार वह भी विद्रोही हो गया। शाहजहाँने जब उसे बादशाह बना देनेका लोभ दिखलाय तब उसने साफ शब्दोंमें कह दिया कि मुझे राज्य नहीं चाहिए। यह ऐतिहासिक घटना है। किन्तु, उसके इस स्वार्थ-त्यागका कारण पिताकी भक्ति थी अथवा पिताके क्रोधकी भीति, इसे कोई नहीं जानता। उसमें यह समझनेकी शक्ति अवश्य ही थी कि जरा-जर्जर और मति-भ्रान्त शाहजहाँ औरंगजेबकी विजयिनी तलवारसे उसकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ है। क्योंकि, वह औरंगजेबका पुत्र था। नाट्यकारने मुहम्मदके चरित्रके इस स्वार्थत्यागका और पीछे पिता-के परित्याग कर देनेका जो सुन्दर चित्र अंकित किया है, उससे मुहम्मदके चरित्रका उत्कर्ष तो हुआ ही है, साथ ही नाटकके साधारण सौन्दर्यकी भी बहुत वृद्धि हुई है।

सुलेमान वीर और सुबुद्धि था। मेनुसीने लिखा है कि शाहजहाँ दारा-की अपेक्षा सुलेमानकी बुद्धि और शक्तिपर अधिक श्रद्धा रखता था। उसके चरित्रको आदर्श चरित्रमें परिणत करके नाट्यकारने इतिहासकी अमर्यादा नहीं की है।

शाहजहाँ नाटकके स्त्रीपात्र उच्च-श्रेणीके हैं। नादिराकी कोमलता, सहिष्णुता और पतिभक्ति हिन्दू-कुल-लक्ष्मियोंके लिए भी आदर्शरूप है। महामायाकी बातें उस राजपूत कुलके सर्वथा उपयुक्त हैं जिसकी कि स्त्रियाँ पति और पुत्रको जन्मभूमिकी रक्षाके लिए भेजकर हँसती हुई 'जौहर व्रत' का पालन करती थीं। पितामें भक्ति रखनेवाली तेजस्विनी जोहरतको, बदला

लेनेवाली और शाप देनेवाली बनाकर, नाट्यकारने इतिहासके साथ चरित्रके सामञ्जस्यकी रक्षा की है। औरंगज़ेबने जब अपने एक पुत्रके साथ जोहरतके विवाहका प्रस्ताव किया, तब जोहरत अपने साथ एक छुरी दिन-रात रखने लगी। वह कहती थी कि पितृघातीके पुत्रके साथ मेरा विवाह हो, इसके पहले ही मैं यह छुरी अपनी छातीमें घुसेड़ लूंगी! जहानारा विदुषी, तीक्ष्णबुद्धि-शालिनी और अलौकिक रूपवती स्त्री थी। शाहजहाँके शेष जीवनका राज-कार्य उसीके इशारेसे सम्पादित होता था। उसने अपनी इच्छासे अपने बूढ़े पिताकी शुश्रूषाके लिए उसके साथ कारागृहमें रहना स्वीकार किया था। उसके इच्छानुसार उसकी समाधि खुले मैदानमें बनाई गई थी और वह पाषाण-सौध-से नहीं, किन्तु हरित दूर्वादलोंसे अच्छादित की गई थी। इस इतिहासविश्रुत स्त्रीके चरित्रका नाट्यकारने जैसा चाहिए वैसा ही चित्र अंकित किया है। जहानारा मानो शाहजहाँको विपत्तिमें बुद्धि और दुःखमें सान्त्वना देनेके लिए, दारा और नादिराको कर्त्तव्यका स्मरण करा देनेके लिए, औरंगजेबको उसके पापोंकी गंभीरता और आत्मवंचनाको अच्छी तरह साफ साफ दिखलानेके लिए बादशाहके अन्तःपुरमें आविर्भूत हुई थी। जहानाराके चरित्रके इस शुभ्र सौन्दर्यको बचाये रखकर द्विजेन्द्रलाल रायने नाट्यकारके महत्वकी रक्षा की है।

पियाराका चरित्र काल्पनिक है। शुजाके दूसरी पत्नी भी रही होगी परन्तु वह कोई इतिहासप्रसिद्ध व्यक्ति नहीं है और शुजाकी जो पत्नी ईरान-के राजाकी कन्या थी वही यह पियारा है, इसका नाटकमें कोई उल्लेख नहीं है। अतएव, पियाराके चरित्रको इच्छानुरूप चित्रित करनेमें कोई बाधा नहीं है। कविने उसे अपने मनके अनुसार ही गढ़ा है। पियारा परिहासरसिका और पतिप्राणा स्त्रीका एक अपूर्व चित्र है। वह हँसी-मजाकका फव्वारा और विमलानंदकी स्फटिक-धारा है। वह पतिकी विपदामें सहायक, उलझन-में मंत्री और वीरतामें बल बन जाती है। बड़े भारी दुर्दिनोंमें भी वह छाया-के समान पतिके साथ रहनेवाली और युद्धमें भी,—यमराजके निमंत्रणमें भी पतिके साथ जानेवाली है। पियाराकी हास्यप्रियता एक प्रकारकी करुण-कथा है। उसके 'मुँहमें हँसी और आँखोंमें आँसू' हैं। स्वामीकी आसन्न-विपत्तिकी चिन्तामें उसका हृदय रुधिराक्त हो जाता है; परंतु, वह चाहती है मनके दुःखको मनहीमें दबाकर हँसीकी स्निग्ध-धारामें पतिकी दुश्चिन्ताग्निको बुझा

देना, कौतुककी तरंगमें युद्धकी इच्छाको बहा देना और हँसीसे चमकते हुए नेत्रोंकी बिजलीके प्रकाशमें पतिका अँधेरेसे घिरा हुआ मार्ग प्रकाशित कर देना। बुद्धिमती पियाराके हास्य-प्रकाशमें शुजाकी सरलता विकसित हो उठी है।

पियाराकी परिहासरसिकतामें एक त्रुटि भी है। उस दुःसमयमें जब कि भाई-भाइयोंमें युद्ध हो रहा था, समदुःखभागिनी स्त्रीका स्वामीके साथ परिहास करना कलाविरुद्ध और सम्पर्कविरुद्ध मालूम होता है और वह पियाराके सुन्दर चरित्रमें मानों एक हृदयहीनताकी छाया डाल देता है। तीक्ष्णदृष्टि नाट्यकारने स्वयं ही इस त्रुटिको देख लिया है और इसीलिए उन्होंने पियाराकी स्वगतोक्तिमें उसकी पतिके साथकी सहज बातचीतमें और शुजाके 'जो मेरे लिए जीने-मरनेका सवाल है उसीको लेकर तुम दिल्लगी करती हो' इस वाक्यमें उस अनुचित व्यवहारकी एक कैफियत दी है। वह परिहास मौखिक था, अन्तरंगसे निकला हुआ नहीं।

परन्तु, दिलदारके परिहासमें इस प्रकारका कोई दोष नहीं आने पाया है। क्योंकि उसका बादशाहके वंशसे कोई सम्बन्ध नहीं था और उसका व्यवसाय ही दिल्लगी करनेका था। दिलदार एक छद्मवेषी दार्शनिक या दानिशमन्द बतलाया गया है: परन्तु, वह कोई ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं है, स्वयं नाट्यकारकी सृष्टि है। लियरके साथ जैसा फूल (Fool) था, वैसे ही मुरादके साथ दिलदार था। फूलने जिस तरह उसकी दुष्ट कन्याओंका कपट समझा देनेका प्रयत्न किया था, दिलदारने भी उसी प्रकार मुरादको पितृद्रोहके महापापसे और औरंगज़ेबके भयंकर छलसे बचानेकी चेष्टा की थी। परन्तु, सुनता कौन है? लियरकी अक्ल ठिकाने नहीं थी और मुराद मूर्ख था। मुगल बादशाहोंके दरबारमें विदूषकोंका रहना इतिहास-प्रसिद्ध बात है, अतएव, दिलदारका चरित्र इतिहाससंगत है और शाहजहाँ नाटकमें उस चरित्रकी सार्थकता स्पष्ट है। दिलदारकी व्यंग्योक्तियाँ, पितृद्रोह और भातृहत्याके षड्यंत्रोंसे कलुषित हुई घटनाओंमेंसे मनको खींचकर उसे बीच-बीचमें विश्राम लेनेका अवकाश देती हैं और मुरादके चरित्रकी त्रुटियोंको अतिशय स्पष्ट करके उसकी बोधहीन सरलतापर करुणाका उद्रेक कर देती हैं।

द्विजेन्द्रलाल हास्यरसके प्रवीण लेखक हैं। उनकी निर्मल परिहास-रसिकता एक हँसीकी लहर या आमोदका बुलबुला बनकर ही लीन नहीं हो जाती। उनकी हँसीमें एक तीव्र श्लेष है जो हृदय-पटपर एक गहरा चिह्न

छोड़ जाता है। पियारा जब 'शेरकी ताकत दाँतोंमें, हाथीकी ताकत सूँड़में' आदि उपमाएँ देनेके पश्चात कहती है कि 'हिन्दुस्तानियोंकी ताकत पीठमें' और जयसिंह जब कहते हैं कि 'मैं औरंगज़ेबकी अधीनता स्वीकार कर सकता हूँ मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता' और इसके उत्तरमें जब जसवन्तसिंह पूछते हैं कि 'क्यों राजा साहब, वे अपनी जातिके हैं, इसीलिए?' और पियारा जब कहती है कि 'मैं रिहाई नहीं चाहती। मुझे यह गुलामी ही पसन्द है।' तथा शुजा इसका उत्तर देता है 'छिः पियारा, तुम हिन्दुस्तानियोंसे भी नीच हो,' * तब कौतुककी हँसी ओठोंमें ही मिल जाती है और प्राण मानो एक तेज कोड़ेकी मारसे काँप उठते हैं।

इतिहासकी बात छोड़ देनेपर हम देखते हैं कि शाहजहाँ नाटकके सभी प्रधान-अप्रधान चरित्र सुपरिस्फुटित हैं। परस्पर विपरीत प्रकृतिके पात्रोंके चित्रोंको पास रखकर नाट्यकारने एककी सहायतासे दूसरेकी उज्ज्वलताको बढ़ाया है। जयसिंहकी विश्वासघातकताके सामने दिलेरखाँका धर्मज्ञान, जिहनखाँकी नीचताके सामने शाहनवाजकी उदारता और जसवन्तसिंहकी संकीर्णताके सामने महामायाके मनका महत्त्व, ये सब बातें काले परदेपर सफेद रंगके चित्रोंके समान उज्ज्वल हो उठी हैं।

मरुभूमिमें प्याससे व्याकुल स्त्री-पुत्रोंकी आसन्न मृत्युकी आशंकासे दाराका भगवानके निकट प्रार्थना करना, उसके थोड़ी ही देर पीछे गऊ चरानेवालोंका आना और जल पिलाना, जयसिंहसे सैन्य न पाकर दुखी हुए सुलेमानका दिलेरखाँसे सहायताकी भिक्षा माँगना और दिलेरखाँसे, जिसकी आशा नहीं थी, ऐसा तेजस्वी उत्तर मिलना कि 'उठिए शाहजादा साहब, राजा साहब न दें, मैं हुक्म देता हूँ। मैंने दाराका नमक खाया है। मुसलमानोंकी कौम नमकहराम नहीं होती।' मुहम्मदका शाहजहाँका दिया हुआ मुकुट न लेकर चला जाना, युद्धमें पराजित होकर शुजा और जसवंतके राज्यमें लौटनेपर महामायाका फाटक बंद करवा देना, पियाराका युद्धक्षेत्रमें जाकर मरनेका संकल्प प्रकट करना

* हमारे पास षष्ठ संस्करणकी मूल पुस्तक है। उसमें यह वाक्य नहीं है। जान पड़ता है, यह पहलेके संस्करणमें रहा होगा, पीछे किसी कारणसे निकाल दिया गया है।

और अंतिम दृश्यमें शाहजहांके पैरोंके नीचे राजमुकुट रखकर औरंगज़ेबका क्षमा-प्रार्थना करना, आदि ऐतिहासिक और काल्पनिक घटनाओंको नाट्यकारने बड़ी चतुराईसे चित्रित किया है। जिस समय दारा सिपरसे बिदा लेता है, उस समयका चित्र बड़ा ही करुण और मर्मस्पर्शी है और जिस दृश्यमें औरंगज़ेब स्वपक्ष और विपक्ष सभीको वक्तृता और अभिनयके मोहसे मुग्ध करके उनके मुखोंसे 'जय औरंगज़ेबकी जय' ध्वनि उच्चारित करा देता है, वह दृश्य सचमुच ही जहानाराके शब्दोंमें 'खूब' है। उस वक्तृताको पढ़नेसे तीसरे रिचर्डका वाक्चातुर्य याद आ जाता है जिसमें उसने लेडी एन और विधवा रानीको भुलानेका प्रयत्न किया था। बुढ़ापेमें शाहजहाँकी अधिक धन-रत्न संग्रह करनेकी लालसा और उससे औरंगज़ेबकी शाही जवाहरात माँगनेकी ऐतिहासिक घटना शाहजहाँ और औरंगज़ेबके काल्पनिक साक्षात् होनेके पहले संभाषणमें अच्छी तरह स्फुटित हुई हैं। औरंगज़ेबने पुकारा, "अब्बा!" शाहजहाँने उत्तर दिया, "मेरे हीरे-मोती लेने आया है? न दूँगा। अभी सबको लोहेकी मुगरियोंसे चूर-चूर कर डालूँगा।"

शाहजहाँ नाटकका एक प्रधान गुण यह है कि इसके प्रत्येक दृश्यमें प्रारम्भसे अन्त तक एक-सा कुतूहल बना रहता है। वक्तृतायें लम्बी होने पर भी उनसे अरुचि नहीं होती। यह साधारण लेखन-शक्तिका काम नहीं है। द्विजेन्द्रबाबूने दाराकी हत्या रंगमंचपर दर्शकोंके सामने दीर्घकालव्यापी आडम्बरके साथ न कराके परदेके भीतर ही कर दी है, इसके लिए वे प्रत्येक नाट्यरसिकके धन्यवाद-भाजन हैं।

इस नाटक-रचनामें कविने जो रचना-कौशल और कवित्व दिखलाया है, विस्तारभयसे उसका पूरा परिचय नहीं दिया जा सका। अब यहाँ मुझे थोड़ी बहुत त्रुटियाँ भी दिखलानी चाहिए, नहीं तो समालोचना एकांगी रह जायगी।

दाराकी मृत्यु ही 'शाहजहाँ' नाटककी सबसे बड़ी घटना है। दाराके जीवनके अन्तके साथ ही नाटककी अंतिम यवनिकाका गिरना उचित था। विद्रोहके पहले शाहजहाँ जिस अवस्थामें था, उसी अवस्थामें आगरेके किले-के महलमें भी था, उसकी स्थितिमें कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। केवल दाराने ही सिंहासन और जीवन दोनोंको खोया। वास्तवमें उसके भाग्यके पलटने पर ही नाटककी भित्ति स्थापित है, और उसकी मृत्यु-घटनासे मन

इस प्रकार अवसादग्रस्त हो जाता है कि आगे एकसे एक उत्तम दृश्य आते हैं, तो भी उनके देखनेका धैर्य नहीं रह जाता है ।

नाटक-पात्रोंकी बात-चीतके ढंगमें यदि व्यक्तिगत विषमता होती, एककी बातोंके ढंगका दूसरेकी बातोंके ढंगसे अन्तर होता, तो नाटकका सौन्दर्य और भी बढ़ जाता । प्रायः सभी प्रधान पात्रोंके मुखोंसे कविने अपने हृदयकी बातें कहलाई हैं । शाहजहाँ, जहानारा, शुजा, पियारा, नादिरा, सुलेमान, दिलदार, ये सभी एक एक कवि हैं । यहाँ तक कि तरुणी जोहरतके वाक्यमें भी कविजन-सुलभ भावुकता टपक रही है । पात्रोंकी बातोंमें यह जो वैचित्र्य-हीनता है, उसकी ओर सबकी दृष्टि आकर्षित होती है ।

अनुवादक
नाथूराम प्रेमी

नाटकके पात्र

पुरुष

शाहजहाँ	...	...	भारत-सम्राट्
दारा शुजा औरंगज़ेब मुराद	...	...	शाहजहाँके लड़के
सुलेमान सिपर	...	...	दाराके लड़के
मुहम्मद सुलतान	...	....,	औरंगज़ेबका लड़का
जयसिंह	...	...	जयपुरके राजा
जसवन्तसिंह	...	...	जोधपुरके राजा
दिलदार	...	...	छद्मवेशी ज्ञानी दानिशमंद

स्त्री

जहानारा	...	...	शाहजहाँकी लड़की
नादिरा	...	...	दाराकी स्त्री
पियारा	...	...	शुजाकी स्त्री
जोहरतउन्निसा	...	...	दाराकी लड़की
महामाया	...	...	जसवन्तसिंहकी रानी

शाहजहाँ

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—आगरेके किलेका शाही महल। **समय**—तीसरा पहर।

[शाहजहाँ पलंगपर आधे लेटे हुए, हथेली पर गाल रक्खे, सिर झुकाए सोच रहे हैं और 'सटक' मुँहसे लगाये बीच बीचमें धुआँ छोड़ते जाते हैं। सामने शाहजादा दारा खड़े हैं।]

शाह०—दारा, हकीकतमें यह बहुत बुरी खबर है।

दारा—शुजाने बंगालमें बगावतका झंडा जरूर खड़ा किया है, मगर अभी तक उसने अपने आपको बादशाह नहीं मशहूर किया। लेकिन, मुराद गुजरातमें बादशाह बन बैठा है और दक्खिनसे औरंगज़ेब भी उधर मिल गया है।

शाह०—औरंगज़ेब भी उससे मिल गया है!—देखूँ, सोचता हूँ।—मगर ऐसा कभी सोचा नहीं था। ऐसा सोचनेकी आदत ही नहीं है। इसीसे कुछ तै नहीं कर सकता। (तमाखू पीना)

दारा—मेरी समझमें नहीं आता कि क्या किया जाय।

शाह०—मेरी भी समझमें नहीं आता। (तमाखू पीना)

दारा—मैं इलाहाबादमें अपने लड़के सुलेमानको शुजाका मुकाबला करनेके लिए हुक्म भेजता हूँ और उसे मदद देनेके लिए महाराज जयसिंह और सिपहसालार दिलेरखाँको भेजता हूँ।

[शाहजहाँ नीचेको नज़र किए हुए तमाखू पीने लगते हैं।]

दारा—और मुरादका मुकाबला करनेके लिए महाराजा जसवन्तसिंहको भेजता हूँ।

शाह०—भेजते हो!—अच्छी बात है। (फिर पहलेकी तरह तमाखू पीने लगते हैं।)

दारा—जहाँपनाह, आप कुछ फिक्र न करें। बागियोंका सिर कुचलना मैं खूब जानता हूँ।

शाह०—नहीं दारा, मुझे इस बातकी फिक्र नहीं है। मुझे फिक्र सिर्फ़ इस बातकी है कि यह भाई-भाईकी लड़ाई है। (तमाखू पीना। थोड़ी देरमें एकाएक) नहीं दारा, कुछ ज़रूरत नहीं। मैं सबको समझा दूँगा। लड़ाई-भिड़ाईका कुछ काम नहीं। उन्हें बे-रोक-टोक शहरके भीतर आने दो।

[तेजीसे जहानाराका प्रवेश]

जहा०—कभी नहीं। अब्बा, यह नहीं हो सकता। रिआयाने बादशाहके सिरपर जो तलवार उठाई है, वह उसी रिआयाके सिरपर पड़नी चाहिए।

शाह०—जहानारा, यह क्या कहती हो? वे मेरे बेटे हैं।

जहा०—बेटे हों। इससे क्या? बेटा क्या बापकी मुहब्बतका ही हक़दार है? बेटेको बापकी ताबेदारी भी करनी चाहिए। अगर बेटा ठीक राहपर न चले, तो उसे सजा देना भी बापका फर्ज़ है।

शाह०—मेरा दिल तो एक ही हुकूमत जानता है, और वह सिर्फ़ मुहब्बतकी हुकूमत। मेरे बेटी-बेटे बे-माके हैं। उन्हें किस दिलसे सजा दूँ जहानारा? देख, उस संगमर्मरके बने हुए (लम्बी साँस लेकर) उस ताजमहलकी तरफ देख, फिर उन्हें सजा देनेके लिए कह।

जहा०—अब्बाजान, क्या आपको यह ज़ेबा देता है! क्या हिन्दुस्तानके के बादशाह शाहजहाँको इसी कमज़ोरीपर फ़ख्र है। क्या बादशाहत भी कोई जनानखाना है? लड़कोंका खेल है—! एक बड़ी भारी सल्तनतका काम आपके हाथमें है। रिआया अगर बागी हो, तो उसे क्या बेटा समझकर

बादशाह मुआफ कर देंगे ? मुहब्बत क्या फ़र्जका खयाल मिटा देगी ?

शाह०—जहानारा, बहस न करो। इस बहसके लिए मेरे पास कोई जवाब नहीं। सिर्फ़ एक जवाब है, वही मुहब्बत। दारा, मैं सिर्फ़ यह सोच रहा हूँ कि इस झगड़ेमें चाहे जो हारे, मुझे दुख ही होगा। इस लड़ाईमें अगर तुम हारे तो तुम्हारा उदास और मुरझाया हुआ चेहरा देखना पड़ेगा; और अगर उन लोगोंने शिकस्त खाई तो मुझे उनके उदास और उतरे हुए चेहरेका खयाल होगा। दारा, लड़ाईकी ज़रूरत नहीं है। वे यहाँ आवें; मैं उन्हें समझा दूँगा।

दारा—अब्बाजान, अच्छी बात है।

जहा०—दारा, तुम क्या इसी तरह अपने बूढ़े बापकी जगह काम करोगे ? अब्बा अगर सल्तनतका काम कर सकते, तो तुम्हारे हाथमें उसकी बागडोर न छोड़ देते। बेअदब शुजा, अपने आप बना हुआ बादशाह मुराद, और उसका मददगार औरंगजेब—ये सब बगावतका झंडा हाथमें लिए डंका बजाते आगरेमें घुसेंगे और तुम अपने बापके कायममुकाम होकर इस बातको खड़े खड़े हँसते हुए देखा करोगे ?—खूब !

दारा—सच है अब्बा, ऐसा कहीं हो सकता है ? मुझे जंगके लिए हुक्म दीजिए।

शाह०—या खुदा ! बापको मुहब्बतसे भरा दिल क्यों दिया था ? उसका दिल और जिगर लोहेका क्यों नहीं बनाया ?—ओफ् !

दारा—अब्बाजान, यह न समझिएगा कि मैं तख़्त चाहता हूँ। यह जंग इसके लिए नहीं है। मैं यह तख़्त और ताज नहीं चाहता। मैंने दर्शन-शास्त्र और उपनिषदोंमें इससे कहीं बढ़कर सल्तनत पाई है। मैं सिर्फ़ आपके तख़्त और ताजकी हिफाजतके लिए यह जंग करना चाहता हूँ।

जहा०—तुम जाते हो इन्साफके तख़्तको बचाने, बुरे कामकी सजा देने, इस मुल्ककी करोड़ों बेगुनाह भोली-भाली रिआयाको जुल्मके पंजेसे छुड़ाने। अगर यह बगावतकी बुरी नीयत दबाई न गई, तो मुगलोंकी यह सल्तनत कितने दिन तक ठहर सकती है ?

दारा—मैं वायदा करता हूँ कि मैं इनमेंसे किसीकी जान न लूँगा और किसीको सताऊँगा भी नहीं। सिर्फ़ उन्हें कैद करके अब्बाजानकी खिदमतमें हाज़िर कर दूँगा। अगर आपका जी चाहे, तो उस वक्त तक उन्हें मुआफ कर

दीजिएगा। मैं चाहता हूँ, वे जान लें कि बादशाह सलामतके दिलमें मुहब्बत है, मगर वे कमज़ोर नहीं हैं।

शाह०—(खड़े होकर) अच्छा तो यही सही। उन्हें मालूम हो जाय कि शाहजहाँ सिर्फ बाप नहीं है, वह बादशाह भी है। जाओ दारा, लो यह पंजा। मैंने अपने अख्तियारात तुमको दे दिये। बागियोंको सजा दो। (पंजा देना)

दारा—जो हुक्म अब्बाजान।

शाह०—लेकिन, यह सजा अकेले उन्हींके लिए नहीं है। यह सजा मेरे लिए भी है। बाप जब लड़केको सजा देता है, तब बेटा सोचता है कि बाप बड़ा बेदर्द है। वह यह नहीं जानता कि बाप जो बेत उठाता है, उसका आधा हिस्सा उसी बापकी पीठपर पड़ता है। (प्रस्थान)

जहा०—दारा, उन लोगोंके यों एकाएक बगावत करनेका सबब भी तुमने कुछ सोचा है?

दारा—वे कहते हैं कि अब्बाके बीमार होनेकी खबर गलत है। बादशाह सलामत अब इस दुनियामें नहीं हैं और मैं उनके नामपर अपना ही हुक्म चला रहा हूँ।

जहा०—यही सही। इसमें गैरमुनासिब क्या है? तुम बादशाहके बड़े बेटे और होनहार वालिए-मुल्क हो।

दारा—वे मेरी बादशाहत कुबूल नहीं करना चाहते।

[सिपरके साथ नादिराका प्रवेश]

सिपर—अब्बा, क्या वे आपका हुक्म नहीं मानना चाहते?

जहा०—भला देखो तो, उनकी इतनी हिम्मत हो गई! (हास्य)

दारा—क्यों नादिरा, तुम सिर क्यों लटकाये हो? कहो, तुम क्या कहना चाहती हो?

नादिरा—सुनोगे? मेरी एक बात मानोगे?

दारा—नादिरा, मैंने कब तुम्हारा कहना नहीं माना?

नादिरा—यह मैं जानती हूँ। इसीसे कुछ कहनेकी हिम्मत करती हूँ। मैं कहती हूँ कि तुम यह जंग न ठानो, भाई-भाईकी लड़ाई न छेड़ो।

जहा०—यह कैसे हो सकता है?

नादिरा—सुनो—

दारा—क्यों ? कहते कहते चुप क्यों हो गई ? तुम ऐसा करनेके लिए ज़ोर क्यों दे रही हो ?

नादिरा—कल रातको मैंने एक बहुत बुरा ख्वाब देखा है।

दारा—वह क्या ?

नादिरा—इस वक्त मैं उसे बयान न कर सकूँगी। वह बड़ा ही खौफ़-नाक है ! नहीं जी, इस लड़ाईकी जरूरत नहीं—

दारा—नादिरा, यह क्या ?

जहा॰—नादिरा, तुम परवेजकी लड़की हो। एक मामूली जंगसे डरकर आँसू बहा रही हो ? इस तरह घबराई हुई बातें कर रही हो ? ऐसी डरी हुई नजरसे देख रही हो ? ये बातें तुम्हें नहीं सोहतीं।

नादिरा—तुम नहीं जानतीं कि वह कैसा दिलको दहला देनेवाला ख्वाब था ! वह बड़ा ही खौफनाक था, बड़ा ही खौफ़नाक था !

जहा॰—दारा, यह क्या ! तुम क्या सोचते हो ! इतने कमज़ोर हो ! जोरूके इतने बसमें हो ! बापका हुक्म लेकर अब क्या तुम्हें औरतका हुक्म लेना पड़ेगा ? याद रक्खो दारा, चाहे कितनी ही मुश्किलात दरपेश हों, तुम्हारे सामने तुम्हारा फर्ज है। अब सोचनेके लिए वक्त नहीं है।

दारा—सच है नादिरा, इस लड़ाईका रुकना गैरमुमकिन है। मैं जाता हूँ। सचमुच हुक्म देने जाता हूँ।　　　　(प्रस्थान)

नादिरा—हाय बहन, तुम इतनी संगदिल हो ! आओ सिपर।

(सिपरके साथ नादिराका प्रस्थान)

जहा॰—इतना डर और इतनी घबराहट ! कुछ सबब नहीं जान पड़ता।

[शाहजहाँका फिर प्रवेश]

शाह॰—जहानारा, दारा गया ?

जहा॰—जी-हाँ अब्बाजान !

शाह॰—(थोड़ी देर चुप रहकर) जहानारा—

जहा॰—अब्बाजान !

शाह॰—क्या तू भी इस झगड़ेमें है ?

जहा॰—किस झगड़ेमें ?

शाह॰—इसी भाइयोंके झगड़ेमें ?

जहा०—नहीं अब्बा.—

शाह०—सुन जहानारा, यह बड़ा ही बेरहमी और बेमुरव्वतीका काम है। क्या करूँ, आज इसकी जरूरत ही आ पड़ी। कोई चारा नहीं। लेकिन तू इस झगड़ेमें न पड़। तेरा काम है—प्यार, रहम, अदब। इस गन्दे काममें तू न पड़। कमसे कम तू तो इस झगड़ेसे पाक रह।

दूसरा दृश्य

स्थान—नर्मदाके किनारे मुरादका पड़ाव

समय—रात

[दिलदार अकेला खड़ा है।]

दिल०—मुराद मुझे मसखरा मुसाहब समझता है। मेरी बातोंमें जो मजाक रहता है, उसे वह बेवकूफ नहीं समझ सकता। वह मेरी बातोंको बेतुकी समझकर हँसता है। मुरादको एक तरफ लड़ाईका खब्त है और दूसरी जानिब वह ऐयाशीमें डूबा हुआ है। समझ और तबियत उसके लिए एक ऐसी जगह है जहाँ उसकी पहुँच ही नहीं।—वह देखो, इधर ही आ रहा है।

[मुरादका प्रवेश]

मुराद—दिलदार, जंगमें हमारी फतह हुई। खुशी मनाओ, ऐश करो। बहुत जल्द अब्बाको तख्तसे उतारकर मैं खुद उसपर बैठूँगा। दिलदार क्या सोचते हो?—तुम तो सिर हिला रहे हो?

दिल०—जहाँपनाह, मुझे आज एक नई बातका पता लगा है।

मुराद—क्या?—सुनें।

दिल०—मैंने सुना है कि खूनी जानवरोंमें यह दस्तूर है कि माँ-बाप अपने बच्चोंको खा डालते हैं।—है या नहीं?

मुराद—हाँ है तो। पर इससे मतलब?

दिल०—लेकिन यह दस्तूर शायद उनमें भी नहीं है कि बच्चे माँ-बाप को खा जायँ?

मुराद—नहीं।

दिल०—इस दस्तूरको शायद खुदाने इन्सानमें ही जारी किया है। दोनों ही ढंग होने चाहिए न! यह उसकी अक्लकी खूबी है!

मुराद—अक्लकी खूबी है! हाः हाः हाः, बड़े मजेकी बात कही दिलदार।

दिल०—लेकिन, इन्सानकी अक्लके आगे खुदाकी अक्ल कोई चीज़ नहीं। इन्सानने खुदासे भी चाल चली है।

मुराद—वह कैसे!

दिल०—जहाँपनाह, उस रहीमने इन्सानको दाँत किसलिए दिये थे? जरूर चबानेके लिए दिये थे, बाहर निकालनेके लिए नहीं। लेकिन, इन्सान उन दाँतोंसे चबाता तो है ही, उनसे हँसता भी है। तब यही कहना पड़ेगा कि उसने खुदासे चाल चली है।

मुराद—यह तो कहना ही पड़ेगा।

दिल०—सिर्फ़ हँसते ही नहीं, बहुतसे लोग गोया हँसनेकी कोशिशमें लगे रहते हैं, यहाँ तक कि इसके लिए रुपये भी खर्च करते हैं।

मुराद—हाः हाः हा।

दिल०—खुदाने इन्सानको जीभ दी थी, साफ मालूम पड़ता है, जायका चखनेके लिए। लेकिन, आदमियोंने उससे बोलनेका काम लेकर तरह तरहकी जबानें पैदा कर दीं।—खुदाने नाक क्यों दी थी? साँस लेनेके लिए ही तो?

मुराद—हाँ, और शायद सूँघनेके लिए भी।

दिल०—लेकिन इन्सानने उसपर भी अपनी बहादुरी दिखाई है। वह उस नाकके ऊपर चश्मा लगाता है। इसमें कोई शक नहीं कि खुदाने नाक इसलिए नहीं बनाई थी।—बहुतसे लोगोंकी नाक सोतेमें खर्राटे भी लेती है।

मुराद—हाँ, खर्राटे लेती है। लेकिन मेरी नाक नहीं बजती।

दिल०—जी, जहाँपनाहकी नाक तो रातको नहीं, दिन-दहाड़े बजती है।

मुराद—अच्छा, इस बार जब बजे तब दिखा देना।

दिल०—जहाँपनाह, यह चीज तो ठीक उस खुदाकी तरह है जिसकी कोई सूरत नहीं है। ठीक ठीक दिखाई नहीं जा सकती। क्योंकि दिखा देनेकी हालत जब होती है, तब यह बजती ही नहीं।

मुराद—अच्छा दिलदार, खुदाने इन्सानको कान दिये हैं। इन्सानने उनके बारेमें क्या बहादुरी दिखाई है?

दिल०—लीजिए, इससे तो मैंने यह एक बड़े मतलबकी बात ईजाद कर डाली। कान पकड़नेसे दिमाग ठिकाने आ जाता है। लेकिन, शर्त यह है कि कानोंके पीछे एक दिमाग होना चाहिए। क्योंकि बहुतोंके दिमाग ही नहीं होता।

मुराद—दिमाग नहीं होता! यह क्या! हाः हाः,—लो, वे भाई साहब आ रहे हैं। इस वक्त तुम जाओ।

दिल०—बहुत खूब। (प्रस्थान)

[दूसरी ओरसे औरंगजेबका प्रवेश]

मुराद—आओ भाई साहिब, मैं तुमको गलेसे लगा लूँ। तुम्हारी ही अक्लकी बदौलत हमें फतह नसीब हुई है। (गले लगाता है।)

औरंग०—मेरी अक्लसे, या तुम्हारी बहादुरी और दिलेरीसे? तुम्हारी जैसी बहादुरी बेशक कहीं देखनेको नहीं मिल सकती। ताज्जुब! तुम मौतसे बिल्कुल डरते ही नहीं!

मुराद—आसफखाँकी वह बात मुझे याद है कि जो लोग मौतसे डरते हैं, वे ज़िन्दा रहनेके मुस्तहक नहीं।—हाँ, यह तो कहो कि तुमने जसवन्तसिंह-के चालीस हजार मुगल सिपाहियों पर कौन-सा जादू डाल दिया था जो वे आखिर जसवन्तसिंहकी ही राजपूत फौजके आगे बंदूकें तानकर खड़े हो गये? मुझे तो वह सब जादू-का तमाशा नजर आया।

औरंग०—मैंने लड़ाई छिड़नेके पहले दिन कुछ सिपाहियोंको मुल्ला बनाकर इस पार भेज दिया था। वे मुगलोंकी फौजको यह कहकर भड़का गये कि काफिरकी मातहतीमें, काफिरके साथ, काफिर दाराकी तरफ़से लड़ना बड़ा बुरा काम है, और कुरानकी रूसे नाजायज है। मैं, उन सिपाहियोंने इसीपर यकीन कर लिया।

मुराद—तुम्हारी चालें निराली और ताज्जुबमें डाल देनेवाली होती हैं।

औरंग०—भाईजान, सिर्फ़ एक तरकीबपर कायम रहनेसे कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। जितनी तरकीबें हों, सबको सोचना चाहिए।

[मुहम्मदका प्रवेश]

औरंग०—मुहम्मद, क्या खबर है?

मुहम्मद—अब्बाजान, महाराजा जसवन्तसिंह अपनी फौजके लिए

घोड़े पर चढ़े हमारे पड़ावके चारों तरफ चक्कर काट रहे हैं।—क्या हम लोग उन पर धावा कर दें?

औरंग०—नहीं।

मुहम्मद—इसका मतलब क्या है?

औरंग०—रजपूतोंका घमंड! इसी घमंडसे राजा जसवन्तको नीचा देखना पड़ेगा। मैं जिस वक्त फौज लेकर नर्मदाके किनारे पहुँचा था, उसी वक्त अगर वे मुझपर धावा कर देते तो मेरा बचना मुश्किल था।—मुझे जरूर शिकस्त खानी पड़ती; क्योंकि तब तक तुम आये ही नहीं थे और तुम्हारी फौज भी सफरकी थकी हुई थी। लेकिन मैंने सुना कि इस तरहका वार करना बहादुरीके खिलाफ समझकर ही राजा साहिब तुम्हारे आ जानेकी राह देखते रहे। जब इतना घमंड है, तब उन्हें ज़रूर नीचा देखना पड़ेगा।

मुहम्मद—तो हम लोग उनसे छेड़छाड़ न करें?

औरंग०—नहीं। हमारे पड़ावके चारों तरफ चक्कर काटनेसे अगर जसवन्तसिंहको कुछ तसल्ली हो, तो वे एक नहीं, सौ बार चक्कर काटा करें। जाओ।

(मुहम्मदका प्रस्थान)

औरंग०—शाहजादेको लड़ाईका बड़ा शौक है।--मेरा यह लड़का सीधा ऊँचे ख़यालोंवाला और निडर है। अच्छा मुराद, अब मैं जाता हूँ। तुम भी जाकर आराम करो। (प्रस्थान)

मुराद—अच्छी बात है।—दरबान, शराब और तबायफ़!— (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—काशीमें शुजाकी फौजका पड़ाव

समय—रात

(शुजा और पियारा)

शुजा—पियारा तुमने कुछ सुना? दाराका बेटा सुलेमान इस जंगमें मेरा मुकाबला करनेके लिए आया है।

पियारा—तुम्हारे बड़े भाई दाराका बेटा दिल्लीसे आया है? सच? तो जरूर अपने साथ दिल्लीके लड्डू लाया होगा। तुम जल्द उसके पास

आदमी भेजो। मेरी तरफ ताक क्या रहे हो ! आदमी भेजो--

शुजा—लड्डू कैसे ! उसके साथ लड़ाई होगी--

पियारा—उसके साथ अगर बेलका मुरब्बा हो तो और भी अच्छा है। मुझे वह भी नापसन्द नहीं है। लेकिन, दिल्लीके लड्डू, सुना है, जो खाता वह पछताता है और जो नहीं खाता वह भी पछताता है। दोनों तरह जब पछताना ही है, तब बनिस्बत न खाकर पछतानेके खाकर पछताना ही अच्छा है,--जल्दी आदमी भेजो।

शुजा—तुम एक साँसमें इतना बक गई कि मुझे जो कुछ कहना था, उसके कहनेकी तुमने फुरसत ही नहीं दी।

पियारा—तुम और क्या कहोगे ! तुम तो सिर्फ़ जंग करोगे।

शुजा—और जो कुछ कहना होगा, वह शायद तुम कहोगी ?

पियारा—इसमें शक क्या है ! हम औरतें जिस तरह समझाकर साफ साफ कह सकती हैं, उस तरह तुम लोग कह सकते हो ? अगर तुम लोग कुछ कहनेको तैयार हो तो पहले ही ऐसी गड़बड़ी कर देते हो और बोलनेमें ऐसी ऐसी गलतियाँ करते हो कि—

शुजा—कि ?

पियारा—और लुगत (कोष) के आधे लफ्ज़ तो तुम लोग जानते ही नहीं। बातें करनेमें तुम कदम कदमपर गलतियाँ करते हो। गूँगे लफ्ज़ों (शब्दों) और अन्धे कायदे (व्याकरण) को मिलाकर ऐसी लँगड़ी ज़बान (भाषा) बोलते हो कि उसे बहुत ही कुबड़ी होकर चलना पड़ता है।

शुजा—लेकिन मुझे तो तुम्हारी भी ये बातें बहुत दुरुस्त नहीं मालूम होतीं।

पियारा—मालूम कैसे हों ? हम लोगोंकी बातें समझनेकी लियाकत ही तुम लोगोंमें नहीं है ! या खुदा ! ऐसी अक़्लमंद औरतोंकी जातको ऐसी अक़्लसे खारिज मर्द जातके हाथमें सौंप दिया है कि बनिस्बत इसके अगर तुम औरतोंको गर्म और खौलते हुए तेलके कढ़ाहेमें चढ़ा देते, तो शायद वे इस हालतसे मज़ेमें रहतीं !

शुजा—खैर,—तुम बके जाओ।

पियारा—शेरकी ताकत दाँतोंमें, हाथीकी ताकत सूँड़में, भैंसेकी ताकत सींगोंमें, घोड़ेकी ताकत पिछले दोनों पैरोंमें, हिन्दोस्तानियोंकी ताकत पीठमें और औरतोंकी ताकत जबानमें होती है।

शुजा—नहीं, औरतोंकी ताकत उनकी नजरमें होती है।

पियारा—ऊंहूं! नजर पहले पहल जरूर कुछ काम• करती है, लेकिन आगे ज़िन्दगीभर तो मर्दपर औरत इसी ज़बानके ज़ोरसे हुकूमत करती है।

शुजा—नहीं। मालूम होता है, तुम मुझे बात कहनेका मौका ही न दोगी। सुनो, मैं क्या कह रहा था—

पियारा—यही तो तुममें ऐब है। तुम्हारी बातोंका दीबाचा (भूमिका) इतना वसीअ (विस्तृत) होता है कि वह पूरा ही नहीं हो पाता और तुम बीचमें ही मतलबकी बात भूल जाते हो।

शुजा—तुम अगर थोड़ी देर और इस तरह बके जाओगी, तो वाकई मैं कहनेकी बात भूल जाऊँगा।

पियारा—तो चटपट कह डालो। देर न करो।

शुजा—तो सुनो—

पियारा—कहो। लेकिन मुख्तसर (संक्षेप)। याद रखना,—एक साँसमें।

शुजा—इस वक्त मुझसे खिलाफ होकर मुझसे लड़नेके लिये दाराका लड़का सुलेमान आया है। उसके साथ बीकानेरके महाराजा जयसिंह और सिपहसालार दिलेरखा भी हैं।

पियारा—अच्छी बात है, एक दिन उन्हे बुलाकर दावत खिला दो।

शुजा—तुम लड़कपन ही किये जाओगी! ऐसा मुश्किल मामला,—खौफ़नाक लड़ाई, सामने है और उसे तुम—

पियारा—इसीसे तो मैं उसे ज़रा आसान बनानेकी कोशिश कर रही हूँ। ऐसे गाढ़े मामलेको अगर पतला न बनाया जायगा, तो वह हजम कैसे होगा? हां, कहे जाओ।

शुजा—अभी राजा जयसिंह मेरे पास आये थे। वे कहते हैं कि बादशाह शाहजहांकी मौत अभी नहीं हुई। उन्होंने मुझे बादशाहके हाथका लिखा खत भी दिखलाया। उस खतमें क्या लिखा है जानती हो?

पियारा—जल्दी कह डालो। अब मुझसे रहा नहीं जाता।

शुजा—उस खतमें उन्होंने लिखा है कि अगर मैं अब भी बंगालको लौट जाऊँ तो वह सूबा न छीना जायगा। नहीं तो,—

पियारा—नहीं तो छीन लिया जायगा, यही न?—जाने दो! अब और तो कुछ कहनेको नहीं है? अब मैं गाना गाऊँ?

शुजा—जानती हो, मैंने जवाबमें क्या लिख दिया है? मैंने लिख दिया है, "अच्छी बात है, मैं बिना लड़े-भिड़े बंगालको लौटा जाता हूँ। अब्बाजानके हुक्म और दबावको मैं सर-आँखोंसे कुबूल कर सकता हूँ, लेकिन, दाराका हुक्म मैं किसी तरह माननेको तैयार नहीं हूँ।"

पियारा—तुम मुझे गाने न दोगे। आप ही बके चले जा रहे हो। अब न गाऊँगी।

शुजा—नहीं, गाओ। लो मैं चुप हूँ।

पियारा—देखो याद रखना। बोलना नहीं।—क्या गाऊँ?

शुजा—जो जी चाहे।—नहीं। कोई मुहब्बतका गाना गाओ। ऐसा गाना गाओ जिसकी जबानमें मुहब्बत, जिसके मतलबमें मुहब्बत, जिसके इशारोंमें मुहब्बत, जिसकी तानमें मुहब्बत और जिसके सममें भी मुहब्बत हो।—ऐसा ही गाना गाओ, मैं सुनूँगा।

(पियारा गाना शुरू करती है।)

शुजा—पियारा, दूरपर एक तरहके शोरो-गुलकी आवाज सुनाई देती है।—जैसे बादल गरज रहा है।—वह देखो!

पियारा—नहीं, तुम गाने न दोगे। मैं जाती हूँ।

शुजा—नहीं, वह कुछ नहीं है, गाओ।

ठुमरी-पंजाबी ठेका।

इस जीवनमें साध न पूरी हुई प्यारकी प्यारे।
छोटा है यह हृदयः इसीसे, इससे नाथ हमारे—
प्रेम-पुंज आकुल असीम यह उमड़ पड़े दृगद्वारे—॥ इस०॥
अपना हृदय अतृप्त, हृदयसे मिला रखूँ कितना ही,
तो भी युगल हृदय-बिच मानों, खटके बिरह सदा ही॥ इस०॥
यह जीवन, यह दुनिया मेरी, कुछ दिनकी हैः इसमें—
सारा प्रेम दे सकूँगी क्या रसिया, रसमें रिसमें॥ इस०॥

चाहूं जितना, और अधिक हो जी चाहे—मैं चाहूं ।
देकर प्रेम न मिटती आशा, ऐसी अकथ कथा है ॥ इस० ॥
बेहद होवे जगह, अमर हों प्रान, मिटे सब बाधा ।
तब पूजेगी प्रेम-आस दे चुके जनम-ऋण साधा ॥ इस० ॥

शुजा—यह जिन्दगी एक खुमारी है । बीच बीचमें ख्वाबकी तरह बहिश्त-से एक तरहका इशारा आकर समझा देता है कि इस खुमारीसे जागना कैसा मीठा और प्यारा है !—यह गाना उसी बहिश्तकी एक झनकार है । नहीं तो यह इतना मीठा और दिलचस्प कैसे होता ?

[नेपथ्यमें तोपकी आवाज]

शुजा—(चौंककर) यह क्या !

पियारा—हां प्यारे ! इतनी रातको तोपकी आवाज,—इतने नजदीक !—दुश्मन तो उस पार है !

शुजा—यह क्या ! वही आवाज ! मैं देख आऊं । (प्रस्थान)

पियारा—यही तो मैं भी सोच रही हूं ! बार बार वही तोपकी आवाज सुन पड़ती है ! यह उमंगसे भरा फौजका शोरो-गुल, हथियारोंकी झनकार ! रातका गहरा सन्नाटा गोया यकायक चोट लगनेसे चिल्ला उठा है !—यह सब क्या है ?

शुजा—पियारा, बादशाही फौजने यकायक मेरे पड़ाव पर धावा बोल दिया है ।

[तेजीसे शुजाका फिर प्रवेश]

पियारा—धावा बोल दिया है ! यह क्या !

शुजा—हॉ, महाराज जयसिंहने यह दगाबाजी की है !—मैं लड़ाईके मैदानमें जा रहा हूं । तुम भीतर जाओ । कुछ डर नहीं है पियारा—

पियारा—शोरो-गुल धीरे धीरे बढ़ता ही जा रहा है । ओः यह क्या है—

(प्रस्थान)

(नेपथ्यमें कोलाहल सुन पड़ता है ।)

[एक ओरसे सुलेमान और दूसरी ओरसे दिलेरखांका प्रवेश]

सुलेमान—सूबेदार (शुजा) कहां हैं ?

दिलेर०—वे इस दरियाकी तरफ़ भाग गये।

सुलेमान—भाग गये? दिलेरखाँ, उनका पीछा करो।

[दिलेरखाँका प्रस्थान। जयसिंहका प्रवेश]

सुलेमान—महाराज, हम लोगोंकी फतह हुई।

जयसिंह—आपने क्या रातको ही नदी पार होकर दुश्मनकी फौज पर धावा बोल दिया था?

सुलेमान—हाँ, मगर क्या उन्होंने यह सोचा न होगा कि मैं ऐसा करूँगा? लेकिन तो भी मुझे इतनी जल्दी कामयाब होनेकी उम्मेद न थी।

जयसिंह—सुल्तान शुजाकी फौज बिल्कुल तैयार न थी। जब क़रीबन आधे आदमी हलाक हो चुके, तब भी अच्छी तरह उनकी आँखें नहीं खुलीं।

सुलेमान—इसका सबब? चचाजान तो सच्चे और मुस्तैद सिपाही हैं। वे पहले हीसे रातको धावा होना मुमकिन समझते होंगे।

जयसिंह—मैंने बादशाह सलामतकी तरफसे उनसे सुलह कर ली थी। वे लड़ाई किये बिना ही बंगालको लौट जानेके लिए राजी हो गये थे। यहाँ तक कि लौट जानेके लिए नाव तैयार करनेका हुक्म भी दे चुके थे।

[दिलेरखाँका फिर प्रवेश]

दिलेर०—शाहजादे साहब, सुल्तान शुजा बाल-बच्चोंके साथ नावपर बैठकर भाग गये।

जय०—देखिए, उसी सजी हुई नाव पर।

सुले०—पीछा करो,—जाओ, फौजको हुक्म दो।

(दिलेरखाँका फिर प्रस्थान)

सुले०—राजासाहब, आपने किसके हुक्मसे यह सुलह की थी?

जय०—खुद बादशाहके हुक्मसे।

सुले०—अब्बाजानने तो मुझे कुछ लिखा ही नहीं। और तुमने भी मुझसे पहले नहीं कहा।—तुम बड़े बेवकूफ हो!

जय०—बादशाहने मना कर दिया था।

सुले०—फिर झूठ बकते हो!—जाओ।

(जयसिंहका प्रस्थान)

मुले०—बादशाहका कुछ और हुक्म है और मेरे अब्बाजानका कुछ और। क्या यह भी मुमकिन है?—अगर यही हो तो राजा साहबको मैंने नाहक बताया। और अगर बादशाहका ऐसा ही हुक्म हो तो? इधर अब्बाने लिखा है कि "शुजाको मय बाल बच्चोंके कैद कर लो।"—नहीं, मैं अब्बाके हुक्मकी तामील करूँगा। उनका हुक्म मेरे लिए खुदाके हुक्मके बराबर है।

चौथा दृश्य

स्थान--जोधपुरका किला। **समय**--सवेरा

[महामाया और चारणियाँ]

महामाया--फिर गाओ, चारणियो, फिर गाओ।

सोहनी। ताल—धमार।

(१)

वह तो गये हैं युद्धमें जय प्राप्त करनेको वहाँ।
ऐसे महा आह्वानमें निर्भय विचरनेको वहाँ॥
यश-मानके हित प्राणका बलिदान देनेको वहाँ
होने अमर, मथने मरणके सिन्धुको, देखो वहाँ॥
उठ वीर-बाला, बाल बाँधो, पोंछ दृग, गौरव गहे।
सधवा रहो, विधवा बनो, ऊँचा तुम्हारा सिर रहे॥

(२)

निज शत्रुके रणके निमंत्रणमें गये हैं वे वहाँ।
मिलते कवचसे हैं कवच, बढ़ता विकट विग्रह वहाँ॥
होता कठिन परिचय खुले खर खड्गहीकी धारसे।
भ्रूभंगसे गर्जन मिले; त्यों रक्त रक्ताकारसे॥
उठ वीर-बाला०॥

(३)

अनुनय. दिखाना पीठ या. होता नहीं रणमें वहा।
लाशें तड़पती सैकड़ों बस एक ही क्षणमें वहा॥
तर खूनसे काली बला-सी मौत नाचे चावसे।
बाजे बाजें जयके. उधर है आर्त्तनाद जुझावसे॥
उठ वीर बाला० ॥

(४)

ज्वाला बुझाने सब गये हैं वे वहाँ संग्राममें।
आते अभी होंगे यहा जय प्राप्त कर निज धाममें॥
अथवा अमर होकर मरेंगे वीरके उत्कर्षसे।
ले गोदमें महिमा वही तुम भी मरोगी हर्षसे॥
उठ वीर बाला० ॥

पहरेदार—महारानी साहबा !

महामाया—सिपाही, क्या खबर है ?

पहरे०—महाराज लौट आये हैं।

महामाया—आ गये ? युद्धमें विजय पाकर लौट आये ?

पहरे०—जी नहीं, इस युद्धमें वे हारकर लौटे हैं।

महा०—हारकर लौटे हैं ' तुम क्या कहते हो ! कौन हारकर लौट आया है ?

पहरे०—महाराज।

महामाया—क्या कहा ? महाराज जसवन्तसिंह हारकर लौट आये हैं ? यह क्या मैं ठीक सुन रही हूँ। जोधपुरके महाराज,—मेरे स्वामी,—युद्धमें हारकर लौट आये हैं ! क्षत्रियोंकी शूरताका ऐसा अन्त,—ऐसी बुरी दशा. हो गई है !—यह असम्भव है। वीर क्षत्रिय युद्धमें हारकर घर नहीं लौटते ! महाराज जसवन्तसिंह क्षत्रियोंके शिरोमणि हैं। युद्धमें हार हो सकती है। अगर वे युद्धमें हार गये हैं तो युद्धभूमिमें मरे पड़े होंगे। महाराज जसवन्तसिंह युद्धमें हारकर कभी लौट ही नहीं सकते। जो लौट कर आया है वह महाराज

जसवन्तसिंह नहीं है। वह उनका भेष धरकर आनेवाला कोई ऐयार है। उसे किलेके भीतर न आने दो। किलेका फाटक बन्द कर लो। गाओ, चारणियो, फिर गाओ।

(चारणियाँ फिर वही गीत गाती हैं)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—ऊसर मैदान। **समय**—रात

[औरंगज़ेब अकेले खड़े हैं।]

औरंग०—आसमानमें काले बादल छाये हैं। आँधी आवेगी। एक दरिया पार कर आया हूं यह एक और बाकी है, बड़ा ही खौफ़नाक है, इसमें बड़ी बड़ी लहरें उठ रही हैं। इसका पाट इतना लम्बा-चौड़ा है कि दूसरा किनारा नज़र नहीं आता। तो भी, पार करना पड़ेगा, और वह भी इसी छोटी-सी नाव से।

[मुरादका प्रवेश]

औरंग०—क्यों मुराद क्या है?

मुराद—दाराके साथ एक लाख घुड़सवार फौज और सौ तोपे हैं।

औरंग०—तो यह खबर ठीक है?

मुराद—ठीक है; हमारे हर एक जासूसका यही अंदाजा है।

औरंग०—(टहलते टहलते)यह—नहीं—यही तो!

मुराद—दाराने इसी पहाड़के उस पार अपना पड़ाव डाला है।

औरंग०—इसी पहाड़के उस पार?

मुराद—हाँ।

औरंग०—यही तो!—एक-लाख सवार,—और—

मुराद—हम लोग कल सबेरे ही—

औरंग०—चुप रहो, बोलो नहीं। मुझे सोचने दो।—इतनी फौज दाराके पास आई कहाँ से?—और एक-सौ तोपें!—अच्छा, मुराद, तुम इस वक्त जाओ, मुझे सोचने दो। (मुरादका प्रस्थान)

औरंग०—यही तो!—इस वक्त पीछे हटनेसे फिर बचाव नहीं हो सकता; लड़नेमें भी जान गँवानी पड़ेगी।—एक-सौ तोपें! अगर,—नहीं,—यह हो ही कैसे सकता है—हूँ (लम्बी साँस छोड़ना) औरंगजेब! इस बार या तो तुम्हारी तकदीर खुल गई या हमेशाके लिये फूट गई!—फूटना?—गैरमुमकिन है। खुलना?—लेकिन किस तरकीबसे? कुछ समझमें नहीं आता।

[मुरादका प्रवेश]

औरंग०—तुम फिर क्यों आये?

मुराद—उधरसे शायस्ताखाँ तुमसे मिलने आये हैं।

औरंग०—आये हैं? अच्छी बात है, इज्जतके साथ उन्हें यहाँ लाओ। नहीं, मैं खुद आता हूँ। (प्रस्थान)

मुराद—यही तो? शायस्ताखाँ हमारे पड़ावमें क्यों आया है!—भाई साहब भीतर ही भीतर क्या मतलब सोच रहे हैं, समझमें नहीं आता। शायस्ताखाँ क्या दारासे दगाबाजी करेगा? देखा जायगा। (इधर उधर टहलने लगता है।)

[औरंगजेबका प्रवेश]

औरंग०—भाई मुराद, इसी वक्त आगरे जानेके लिए मय फौजके रवाना होना होगा। तैयार हो जाओ।

मुराद—यह क्या! इतनी रातको?

औरंग०—हाँ, इतनी रातको। पड़ावके डेरे जैसेके तैसे पड़े रहने दो। दाराकी फौजपर हम धावा नहीं करें। इस पहाड़के दूसरे किनारेसे आगरे जानेकी एक राह है। उसीसे चलेंगे। दाराको शक न होगा। दारासे पहले हमें आगरे पहुँचना है। तैयार हो जाओ।

मुराद—तो क्या अभी?

औरंग०—बहस करनेके लिए वक्त नहीं है। तख्त चाहो, तो कुछ कहो सुनो नहीं। नहीं तो याद रक्खो, मौतका सामना है।

(दोनोंका प्रस्थान)

छठा दृश्य

स्थान—प्रयागमें सुलेमानका पड़ाव

समय—तीसरा पहर

[जयसिंह और दिलेरखाँ]

दिलेर०—आखिरी लड़ाईमें भी औरंगज़ेबकी फतह हुई। सुना राजा साहब।

जयसिंह—मैं पहले ही जानता था।

दिलेर०—शायस्ताखाँने दगाबाजीकी। आगरेके पास बड़ी भारी लड़ाई हुई। उसमें हारकर दारा दोआबेकी तरफ भाग गये। उनके पास सब मिलकर सौ साथी हैं और तीस लाख रुपये हैं।

जय०—उनको भागना ही पड़ता। मैं जानता था।

दिलेर०—आप तो सभी जानते थे!—दारा भागनेके वक्त जल्दीके बाइस बहुत-सा रुपया नहीं ले जा सके। लेकिन, उसके बाद सुना, बूढ़े बादशाहने सत्तावन खच्चरोंपर मोहरें लदाकर दाराके लिए भेजीं। पर राहमें वह रकम भी जाटोंने लूट ली।

जय०—बेचारा दारा!—लेकिन, यह मैं पहले ही जानता था।

दिलेर०—औरंगज़ेब और मुराद फतहयाबीकी खुशी मनाते हुए आगरेमें दाखिल हुये हैं। मतलब यह कि इस वक्त औरंगजेब ही बादशाह हैं।

जय०—यह सब मैं पहलेहीसे जानता था।

दिलेर०—औरंगज़ेबने मुझे खतमें लिखा है कि अगर तुम मय अपनी फौजके सुलेमानको छोड़कर चले आओ, तो मैं तुम्हें बहुत बड़ी रकम इनाममें दूँगा। आपको भी शायद यही लिखा है।

जय०—हाँ।

दिलेर—राजा साहब, इस जंगके आखिरी नतीजेके बारेंमें आपकी क्या राय है?

जय०—मैंने कल एक ज्योतिषीसे इसके बारेमें पूछा था। उन्होंने कहा, इस समय भाग्यके आकाशमें औरंगज़ेबका सितारा बलन्द हो रहा है और दाराका सितारा डूब रहा है।

दिलेर०—तो फिर हम लोगोंको इस वक्त क्या करना चाहिए?

जय०—मैं जो करूँ, उसे तुम देखते भर जाओ।

दिलेर०—अच्छा इन सब बातोंमें मेरी अक्ल उतना काम नहीं करती। मगर एक बात—

जय०—चुप रहो, सुलेमान आ रहे हैं।

[सुलेमानका प्रवेश]

जयसिंह और दिलेर०—शाहज़ादे साहब, तसलीम।

सुले०—राजा साहब, अब्बा हारकर भाग गये।—यह बादशाह शाहजहाँका खत है। (पत्र देता है)

जय०—(पत्र पढ़कर) कहिये शाहज़ादे साहब, क्या किया जाय?

सुले०—बादशाहने मुझे अब्बा जानकी कुमकको फौज लेकर जल्द रवाना होनेके लिए लिखा है। मैं अभी जाऊँगा। तम्बू उतार लिए जायँ और फौज को हुक्म दिया जाय कि—

जय०—शाहज़ादे साहब, मेरी समझमें और भी ठीक खबर पानेके लिए रुकना मुनासिब है। क्यों खाँ साहब, तुम्हारी क्या राय है?

दिलेर०—मेरी भी यही राय है।

सुले०—इससे बढ़कर ठीक खबर और क्या हो सकती है? खुद बादशाहके दस्तखत हैं।

जय०—मुझे यह जाल जान पड़ता है। खासकर बादशाह कुछ काम नहीं कर सकते। उनकी आज्ञा ही नहीं है। आपके पिताकी आज्ञा पाए बिना हम यहाँसे एक कदम भी नहीं हट सकते। क्यों दिलेरखाँ?

दिलेर०—आपका कहना ठीक है।

सुले०—लेकिन अब्बा तो भाग गये हैं। वे हुक्म कैसे दे सकते हैं?

जय०—तो हमको अब उनकी जगहपर औररंगज़ेबकी आज्ञाकी राह देखनी पड़ेगी,—अगर यह बात सच हो।

सुले०—क्या! औरंगज़ेबके हुक्मकी,—अपने वालिदके दुश्मनके हुक्मकी, मैं राह देखूँगा?

जय०—आप न देखें, हमको तो देखनी पड़ेगी,—क्यों दिलेरखाँ ?

दिलेर०—हाँ, मौक़ा तो कुछ ऐसा ही आ पड़ा है !

सुले०—तो क्या आप दोनों आदमियोंने मिलकर दगा करनेकी ठान ली है ?

जय०—हम लोगोंका दोष क्या है ?—बिना उचित आज्ञा पाये हम किस तरह कोई काम कर सकते हैं ? लाहौरमें शाहजादे दाराके पास जानेकी कोई उचित और माननीय आज्ञा हमने नहीं पाई ।

सुले०—मैं तो हुक्म दे रहा हूँ ।

जय०—आपकी आज्ञासे हम आपके पिताकी आज्ञाके विरुद्ध कुछ नहीं कर सकते । क्यों खाँ साहब ?

दिलेर०—कैसे कर सकते हैं ;

सुले०—समझ गया । आप लोगोंने दगा करनेकी ठान ली है । अच्छा, मैं खुद ही फौजको हुक्म देता हूँ । (प्रस्थान)

दिलेर०—राजा साहब, आप यह क्या कर रहे हैं ?

जय०—डरनेकी कोई बात नहीं । मैंने सब सिपाहियोंको अपनी मुट्ठीमें कर रक्खा है ।

दिलेर०—आप जैसा होशियार कामकाजी आदमी मैंने कोई नहीं देखा । लेकिन, यह काम क्या ठीक हो रहा है ?

जय०—चुप रहो । इस समय ज़रा अलग रहकर तमाशा देखना ही हमारा काम है । अभी हम एकदम औरंगज़ेबकी तरफ झुक भी न पड़ेंगे । कुछ रुकना होगा । क्या जानें—

[सुलेमानका फिर प्रवेश]

सुले०—फौजके सिपाही भी सब इस धोखादेहीमें शामिल हैं । आप लोगोंके हुक्मके बगैर वे टससे मस होना नहीं चाहते ।

जय०—यही फौजी दस्तूर है ।

सुले०—राजा साहब, बादशाहने मुझे अब्बाकी कुमकपर जानेको लिखा है । अब्बाके पास जानेके लिए मेरा दिल बेक़रार है । मैं आप लोगोंसे मिन्नत करता हूँ ।—दिलेरखाँ, दाराका बेटा मैं हाथ जोड़कर आप लोगोंसे यह भीख माँगता हूँ कि आप न जायँ पर मेरे सिपाहियोंको मेरे साथ अब्बाके पास लाहौर जानेका हुक्म दे दें । मैं देखूँ, इस बागी औरंगज़ेबमें

कितनी बहादुरी है। अगर मैं अपने इन दिलेर सिपाहियोंको लेकर अब भी जंगके मैदानमें पहुँच सकता,—राजा साहब,—दिलेरखाँ, हुक्म दे दो! इस मेहरबानीके बदले में ताजिन्दगी गुलाम रहूँगा।

जय०—बादशाहकी आज्ञाके बिना हम यहाँसे एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते।

सुले०—दिलेरखाँ, मैं शाहजादा दाराका बेटा, घुटने टेककर यह भीख माँगता हूँ। (घुटने टेकता है।)

दिलेर०—उठिए शाहजादे साहब, राजा साहब न दें, मैं हुक्म देता हूँ। मैंने दाराका नमक खाया है। मुसलमानोंकी कौम नमकहराम नहीं होती। आइए शाहजादे साहब, मैं अपनी सारी फौज लेकर आपके साथ लाहौर चलता हूँ। और कसम खाता हूँ कि अगर शाहजादा मुझे छोड़ न देंगे, तो मैं खुद शाहजादेको कभी न छोड़ूँगा। मैं जरूरत पड़नेपर शाहजादे दाराके बेटेके लिए जान देनेको तैयार हूँ। आइए शाहजादे साहब, मैं इसी वक्त हुक्म देता हूँ। (सुलेमान और दिलेरखाँका प्रस्थान)

जय०—लो, खाँ-साहब एक बूँद पानीमें ही गल गये! अपनी भलाईकी उन्होंने पर्वाह ही न की। तो अब मैं क्या करूँ?—अपनी सेना लेकर आगरे ही चलूँ। (प्रस्थान)।

सातवाँ दृश्य

स्थान—आगरेका महल। **समय**—तीसरा प्रहर।

[शाहजहाँ और जहानारा]

शाहजहाँ----जहानारा, मैं बड़े शौकसे औरंगजेबकी राह देख रहा हूँ। वह मेरा बेटा,----मेरा जवाँमर्द फतहयाब बेटा है: मेरी लाज और मेरी इज्जत है।

जहानारा----इज्जत! अब्बा, इतना मक्कार,----इतना झूठा है वह! उस दिन जब मैं उसके खेमेमें गई, तब उसके ढँगसे ऐसा मालूम पड़ा कि वह आपको बहुत मानता है और आपकी बड़ी इज्जत करता है। उसने

कहा, मुझसे यह बड़ा भारी कुसूर हो गया है, मैंने यह बड़ा भारी गुनाह किया है। साथ ही साथ उसने दो-एक बूँद आँसू भी गिरा दिये। उसने कहा, दाराकी तरफ जो बड़े बड़े लायक आदमी हैं, उसके नाम अगर मुझे मालूम हो जायें, तो मैं बेधड़क अब्बाजानके हुक्मके मुताबिक मुरादको छोड़कर दाराकी तरफ हो जाऊँ। मुझे उसकी इस बातपर यकीन हो गया और मैंने बदनसीब दाराके तरफदार दोस्तोंके नाम उसे बतला दिये। बस,---उसने उन्हें उसी वक्त कैद कर लिया। मैंने दाराको रुक्का भेज दिया था। राहमें वह रुक्का भी औरंगजेबने हथिया लिया। वह ऐसा दगाबाज और फरेबी है!

शाह०----नहीं जहानारा, यह वह नहीं कर सकता। ना ना ना! मैं इस बातपर यकीन न करूँगा।

जहा०----आवे वह एक दफा इस किलेमें। मैं धोखा देकर चालाकीसे उसे कैद करूँगी। यहाँ मैंने हथियारबंद सौ सिपाही छिपा रक्खे हैं। उसे मैं आपके सामने ही कैद करूँगी।

शाह०----जहानारा, यह क्या बात है!----वह मेरा लख्तेजिगर, तुम्हारा भाई है। नहीं जाहनारा, ऐसा करनेकी जरूरत नहीं है। वह आवे। मैं उसे मुहब्बतसे काबूमें कर लूँगा। उससे भी अगर वह काबूमें न आवेगा तो उसके आगे मैं,----बालिद, उसके आगे घुटने टेककर तुम सब लोगोंकी और अपनी जानकी भीख माँग लूँगा। कहूँगा, हम और कुछ नहीं चाहते; हमें जीने दो, हम लोगोंको आपसमें एक दूसरेसे मुहब्बत करनेका मौक़ा दो।

जहा०---अब्बा, इस बेइज्जतीसे मैं आपको बचाऊँगी।

शाह०----बेटेसे इल्तिजा करनेमें बापकी बेइज्जती नहीं हो सकती।

[मुहम्मदका प्रवेश]

शाह०----यह देखो, मुहम्मद आ गया! तुम्हारे अब्बा कहाँ हैं?

मुहम्मद---बाबा जान, मुझे मालूम नहीं।

शाह०----यह क्या! मैंने तो सुना था, वह यहाँ आनेके लिए घोड़ेपर सवार हो चुका है।

मुह०---किसने कहा? वे तो घोड़ेपर चढ़कर बादशाह अकबरकी

कब्रपर नमाज पढ़ने गये हैं। मुझे जहाँ तक मालूम है, यहाँ आनेका उनका बिलकुल इरादा नहीं है।

जहा०----तो तुम यहाँ क्यों आये हो?

मुह०--इस किलेके शाही महलपर कब्जा करनेके लिए।

शाह०—यह क्या!—नहीं मुहम्मद, तुम हँसी कर रहे हो।

मुह०—नहीं बाबा जान, यह सच बात है।

जहां०—हाँ।--तो मैं तुमको ही कैद करूँगी। (सीटी बजाती है)

[हथियारबन्द पाँच सिपाहियों प्रवेश]

जहा०----मुहम्मद हथियार दे दो।

मुह०---क्यों?

जहा०----तुम मेरे कैदी हो। सिपाहियो हथियार ले लो।

मुह०----तो मुझे भी अपने सिपाहियोंको बुलाना पड़ा।

(सीटी बजाता है)

[दस शरीर-रक्षक सिपाहियोंका प्रवेश]

मुह०- --मेरी फौजके हजार सिपाहियोंको बुलाओ।

जहा० -हजार सिपाही! उन्हें किलेके भीतर किसने घुसने दिया?

शाह०---मैंने। सब कुसूर मेरा है। मैंने मुहब्बतके मारे, औरंगज़ेबने खतमें जो कुछ मुझसे माँगा था, सब उसे दिया था। ओः, मैंने ख़्वाबमें भी यह नहीं सोचा!—मुहम्मद!

मुह०—बाबा जान!

शाह०—तो क्या अब यही समझ लूं कि मैं तुम्हारा कैदी हूँ?

मुह०—कैदी तो नहीं हैं, पर हाँ, आप बाहर नहीं जा सकते।

शाह०—मैं ठीक ठीक समझ नहीं सकता। यह क्या सच्चा वाकआ है या यह सब ख़्वाब देख रहा हूँ! मैं कौन हूँ? मैं शहंशाह शाहजहाँ हूँ। तुम मेरे पोते, मेरे सामने तलवार लिये खड़े हो! यह क्या है एक ही दिनमें क्या दुनियाका सब कायदा उलट गया? एक दिन जिसकी गुस्सेसे लाल आँखें देखकर औरंगज़ेब जमीनमें धँस-सा जाता था, उसके,---उसके,—बेटेके हाथोंमें,—वही शाहजहाँ कैदी है!—जहानारा!—कहाँ गई!---यह है! यह क्या शाहजादी है? तेरे होठ हिल रहे हैं, मुँहसे

आवाज़ नहीं निकलती: तू फीकी और सूखी नज़रसे एकटक देख रही है; तेरे गुलाबी गालोंपर स्याही फेर दी गई है।—क्या हुआ बेटी !

जहा०—कुछ नहीं अब्बा ! लेकिन मेरे दिलकी हालत आप कैसे जान गये, मैं सिर्फ़ यही सोच रही हूँ।

शाह०—मुहम्मद, तुमने सोचा है कि मैं इस जालसाजी,—इस जुल्मको यहाँ इसी तरह बैठे बैठे किसी मददगारके न होनेसे चुपचाप सह लूँगा ! तुमने सोचा है, वह शेर बूढ़ा है, इसलिए तुम्हारी लातें सह लेगा ? मैं बूढ़ा शाहजहाँ जरूर हूँ; लेकिन मैं शाहजहाँ हूँ।—ए कौन है ? ले आओ मेरा जिरह-बख्तर और तलवार।—कोई नहीं है ?

मुह०—बाबा जान, आपके ख़ास सिपाही किलेसे बाहर निकाल दिये गये हैं।

शाह०—किसने उन्हें निकाल दिया ?

मुह०—मैंने।

शाह०—किसके हुक्मसे ?

मुह०—अब्बाके हुक्मसे। इस वक्त मेरे ये हजार सिपाही ही जहाँ-पनाहकी हिफाजतका काम करेंगे।

शाह०—मुहम्मद ! दगाबाज !

मुह०—मैं सिर्फ़ अब्बाके हुक्मकी तामील कर रहा हूँ। मैं और कुछ नहीं जानता।

शाह०—औरंगजेब ! नहीं, आज वह कहाँ, और मैं कहाँ !—जहा-नारा, तब भी, अगर आज मैं इस किलेके बाहर जाकर एक बार अपने सिपाहियोंके सामने खड़ा हो सकता, तो अब भी इस बूढ़े शाहजहाँकी फतह-याबीके नारोंसे औरंगजेब जमीनमें घुटने टेक देता।—एक दफा, सिर्फ़ एक दफा बाहर निकल पाता ! मुहम्मद ! मुझे एक दफा बाहर जाने दो ! एक दफा ! सिर्फ एक दफा !!

मुह०—बाबा जान, मेरा कुसूर नहीं। मैं अब्बाके हुक्मका पाबंद हूँ।

शाह०—और मैं क्या तुम्हारे अब्बाका अब्बा नहीं हूँ ? वह अगर अपने वालिदपर ऐसा जुल्म कर रहा है, तो तुम क्यों फिर उसके हुक्मके पाबंद हो ?—मुहमद, आओ, किलेका फाटक खोल दो।

मुह०—मुआफ़ कीजियेगा बाबा जान। मैं अब्बाके हुक्मको टाल नहीं सकता।

शाह०—न खोलोगे ? न खोलोगे ? देखो, मैं तुम्हारे बापका बाप,—बीमार लागर और जईफ़ हूँ। मैं और कुछ नहीं चाहता, सिर्फ़ एक दफा किलेके बाहर जाना चाहता हूँ। कसम खाता हूँ, फिर लौट आऊँगा। न जाने दोगे ?—न जाने दोगे ?

मुह०—मुआफ़ कीजिएगा बाबा जान, यह मुझसे न हो सकेगा।

(जाना चाहता है

शाह०—ठहरो मुहम्मद ! (कुछ सोचनेके बाद राजमुकुट और पलंगपरसे कुरान उठाकर) देखो मुहम्मद, यह मेरा ताज और यह मेरा कुरान है ! यह कुरान लेकर मैं कसम खाता हूँ कि बाहर जाकर सब रिआयाकी भीड़के सामने यह ताज मैं तुम्हारे सिरपर रख दूँगा। किसी की मजाल नहीं जो चू करे। मैं आज बूढ़ा, लागर और लकवेकी बीमारीसे लाचार हूँ। लेकिन बादशाह शाहजहाँ इतने दिनोंसे इस तरह हिन्दोस्तानकी सल्तनत करते आ रहा है कि वह अगर एक दफा अपनी फौजके सिपाहियोंके सामने जाकर खड़ा हो सके तो सिर्फ़ उसकी आग बरसानेवाली नजरसे ही सौ औरंगजेब खाक हो जायँ। मुहम्मद, मुझे छोड़ दो। तुम हिन्दोस्तानकी बादशाहत पाओगे। कसम खाता हूँ मुहम्मद !—मैं सिर्फ़ इस दगाबाज जालसाज औरंगजेबको एक दफा समझूँगा।—मुहम्मद !

मुह०—बाबा जान, मुआफ कीजिएगा।

शाह०—देखो, यह लड़कोंका खेल नहीं है। मैं खुद बादशाह शाहजहाँ कुरान लेकर कसम खाता हूँ। देखो, एक तरफ तुम्हारे अब्बाका हुक्म है, और दूसरी जानिब हिन्दोस्तानकी बादशाहत। इसी दम जो चाहे पसन्द कर लो।

मुह०—बाबा जान, मैं अब्बाके हुक्मके खिलाफ कोई काम नहीं कर सकता।

शाह०—एक बादशाहतके लिए भी नहीं ?

मुह०—दुनिया-भरकी बादशाहतके लिए भी नहीं।

शाह०—देखो मुहम्मद, सोच लो। अच्छी तरह सोच लो—हिन्दोस्तानकी सल्तनत।

मुह०—मैं यहाँ खड़ा होकर अब यह बात नहीं सुनूँगा : यह लालच बहुत बड़ा है। दिल बड़ा ही कमजोर है। बाबा जान, मुआफ़ कीजिएगा। (प्रस्थान)

शाह०—चला गया! चला गया! जहानारा, चुप क्यों है?

जहा०—औरंगजेब! तुम्हारा ऐसा सआदतमंद लड़का! वह अपने बापके हुक्मको माननेका फ़र्ज़ अदा करनेमें एक बड़ी भारी सल्तनतको लात मारकर चला जाता है और तुमने अपने बूढ़े बापको उसकी ऐसी मुहब्बतके बदलेमें धोखा देकर दगासे कैद कर लिया है!

शाह०—सच कहती है बेटी। ए औलादवाले लोगो, बिना खुद खाये अपने बेटों को मत खिलाओ, इन्हें छातीसे लगाकर मत सुलाओ; इन्हें हँसानेके लिए प्यारकी हँसी मत हँसो। ये सब एहसान फ़रामोसीके पौधे हैं। ये सब छोटे छोटे शैतान हैं। इन्हें आधा पेट खिलाओ। इन्हें रोजाना सुबह और शाम कोड़ोंसे मारो। हमेशा लाल आँखें दिखाकर डाँटते रहो। तब शायद ये मुहम्मदकी तरह तुम्हारे ताबेदार और सआदतमंद होंगे। उन्हें यह सजा देनेमें अगर तुम्हारे कलेजेमें कसक हो, तो तुम उस कलेजेके टुकड़े टुकड़े कर डालो; आँखोंमें आँसू आवें, तो आँखें निकालकर फेंक दो, दुखसे चिल्लानेको जी चाहे, तो दोनों हाथोंसे अपना गला घोंट लो।—ओः—

जहा०—अब्बा, इस कैदखानेके कोनेमें बैठकर लाचार बच्चोंकी तरह रोने-धोने या कुढ़नेसे कुछ न होगा, लात खाये हुये लूले आदमीकी तरह बैठकर दाँत पीसने और कोसनेसे कुछ न होगा, किसी मरते हुए गुनहगारकी तरह आखिरी वक्तमें एक दफा खुदाको रहीम करीम कहकर पुकारनेसे कुछ न होगा। उठिए, चोट खाये हुए जहरीले नागकी तरह फन फैलाकर पुकारते हुए उठिए, बच्चा छिन जानेपर बाघिन जैसे गरज उठती है वैसे ही गरज उठिए, जुल्मसे पागल हुई क़ौमकी तरह जाग उठिए। होनीकी तरह सख़्त, हसद की तरह अन्धे और शैतानकी तरह बेरहम बन जाइए। तब उससे पेश पाइयेगा।

शाह०—अच्छी बात है। ऐसा ही हो। आ बेटी, तू भी मेरी मददगार हो। मैं आगकी तरह जल उठूँ, तू हवाकी तरह चल। मैं भू-चालकी तरह इस सल्तनतको उलट-पलटकर सत्यानाश कर दूँ, तू समंदरकी लहरोंकी तरह आकर उसे डुबा दे। मैं जंग ले आऊँ, तू मरी ले आ। आ तो, एक दफा

सल्तनतको उथल-पुथल करके चल दें। फिर चाहे जहाँ जायँ—कुछ हर्ज़ नहीं। तोपकी तरह शोले उड़ाते हुए बलंद होकर आसमानमें छा जायँ।

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—मथुरामें औरंगज़ेबका पड़ाव

समय—रात

[दिलदार अकेला खड़ा है]

दिल०—मुराद! तुम कैसे धीरे-धीरे सीढ़ी दर-सिढ़ी गिरते जा रहे हो। अव्वल तो यों ही शराबके बहावमें बहे जा रहे हो, उस पर भी तुर्रा यह है कि तवायफोंकी नाजो-अदा (हाव-भाव) का तूफान ज़ोरोंसे बर्पा है। तुम ज़रूर डूबोगे। अब देर नही है। मुराद! तुम्हे देखकर मुझे कभी कभी बेहद सदमा होता है। तुम बहुत ही भोले हो। शाहजादीके कहने सुननेसे औरंगजेब को दगासे कैद करने गये थे। पानीमें बसकर मगर-मच्छसे दुश्मनी!—आज उसके बदले की दावत है।—जहाँपनाह आ गये!

[मुरादका प्रवेश]

मुराद—भाई साहब अभी तक नमाज पढते हैं!—उनकी जिन्दगी आकबत-अन्देशीमें (परलोकके ध्यानमें) ही गुजरी। इस जिन्दगीका मजा उन्होने कुछ भी न पाया।—दिलदार क्या सोच रहे हो?

दिल०—जहाँपनाह, सोच रहा हूँ कि मछलियोंके डैने न होकर अगर पंख होते, तो जान पड़ता है, शायद वे उड़ने लगतीं।

मुराद—अरे, मछलियोंके अगर पंख होते: तो वे चिड़िया ही न कहलातीं? उन्हें कोई मछली कहता ही क्यों?

दिल०—हाँ ठीक है। यह मै पहले नहीं सोच सका था। इसीसे इस झमेलेमें पड़ गया। अब साफ समझमें आ रहा है।—अच्छा जहाँपनाह, बत्तख जैसे परंद बहुत कम नजर आते हैं। वह पानीमें तैरता, जमीन पर

चलता और आसमानमें उड़ता है।

मुराद—उससे और मौजूदा दलीलसे क्या वास्ता, बेवकूफ !

दिल०—उस रहीम करीमने दोनों पैर नीचेके हिस्सेमें दिये थे चलनेके लिए; यह बात साफ जाहिर है।

मुराद—हाँ, बिल्कुल साफ।

दिल०—लेकिन पैर अगर सोचनेका काम करना शुरू कर दें तो दिमाग को सही रखना मुश्किल हो जायगा।—अच्छा जहाँपनाह, आप यह जानते हैं कि खुदाने जानवरोंको सिर सामने और पूँछ पीछे क्यों दी है ?

मुराद—अरे बेवकूफ, अगर उनका सिर पीछे होता, तो वही उनका सामनेका हिस्सा होता।

दिल०—बजा फरमाया जहाँपनाह।—कुत्ता दुम क्यों हिलाता है, इसका सबब मामूली नहीं है।

मुराद—क्या सबब है।

दिल०—कुत्ता दुम हिलाता है, इसका सबब यह है कि कुत्तेमें दुमसे ज्यादह जोर है। अगर दुममें कुत्तेसे ज्यादह जोर होता, तो दुम ही कुत्तेको हिलाती।

मुराद०—हाः हाः—वह देखो: भाई साहब आ गये !

[औरंगजेबका प्रवेश]

औरंग०—तुम आ गये भाई, अपने मसखरेको भी साथ लेते आये ?

मुराद—हाँ भाई साहब, दिलबस्तगीके लिए मसखरा भी चाहिये और तवायफ भी।

औरंग०—हाँ, जरूर चाहिये।—कल यकायक बहुत-सी नौजवान और परीजमाल तवायफें आकर मौजूद हुई। तुम जानते हो, मुझे तो यह शौक है नहीं। मैं तो अब मक्के शरीफको जा रहा हूँ। मैंने सोचा, उनसे तुम्हारा दिलबहलाव हो सकता है। ये बहुत उम्दा शराबकी कई बोतलें भी मुझे फिरंगियोंसे मिल गई हैं।—भला देखो यह शराब कैसी है। (बोतलें देता है)

मुराद—देखूँ ! (पात्रमें डालकर पीना) वाह ! क्या तुहफा है ! वाह ! दिलदार क्या सोच रहा है ? जरा-सी पियेगा ?

दिल०—जहाँपनाह, मैं एक बात सोच रहा था कि सब जानवर सामने ही क्यों चलते हैं ?

मुराद—क्यों ? पीछेकी तरफ नहीं चल सकते, इसलिए।

दिल०—नहीं। इसका सबब यह है कि उनकी दोनों आँखें सामनेकी तरफ हैं। लेकिन जो अंधे हैं, उनका सामने चलना और पीछे चलना बराबर है—एक ही बात है।

मुराद—तुहफा है! ये फिरंगी शराब बहुत अच्छी बनाते हैं। (फिर पीना) भाई-साहब, तुम भी जरा-सी पी लो।

औरंग०—नहीं। तुम तो जानते ही हो, मुझे शराबसे परहेज है। कुरानमें शराब पीनेकी मनाही है।

दिल०—अंधे, जागो, देखो रात है या दिन।

मुराद—कुरानकी सभी हिदायतोंको माननेसे दुनियाका काम नहीं चल सकता। (शराब पीता है।)

दिल०—हाथीमें जितना जोर है, उतनी ही अगर अक्ल भी होती तो वह कैसा आकिल जानवर होता! तब हाथीके ऊपर फीलबान न बैठता, उसके ऊपर हाथी ही बैठता। इतनी ताकत—जो इतने बड़े जिस्मको मय सूँड़के लिए घूमती फिरती है—ओः!

औरंग०—भाई, तुम्हारा मसखरा तो खूब दिल्लगीबाज है!

मुराद—यह एक नायाब गौहर है।—तवायफें कहाँ हैं?

औरंग०—उस तम्बूमें। तुम खुद ही जाकर बुला लाओ।

मुराद—अभी लो। मुराद जंगमें या ऐशमें कभी पीछे नहीं हटता।

(प्रस्थान)

(दिलदार 'अन्धे, जागो' कहकर मुरादके पीछे पीछे जाना चाहता है और औरंगजेब उसे रोकता है।)

औरंग०—ठहरो, तुमसे कुछ कहना है।

दिल०—मुझे न मारो बाबा, मैं तख्त भी नहीं चाहता, मक्का भी नहीं चाहता।

औरंग०—तुम कौन हो, ठीक कहो। तुम कोरे मसखरे नहीं हो। कौन हो तुम?

दिल०—मैं एक पुराना गिरहकट, धोखेबाज चोर हूँ। मेरी आदत है खुशामद, शरारत, पाजीपन। मैं सियारसे भी ज्यादा सयाना, कुत्तेसे भी ज्यादा खुशामदी और चिड़ियोंसे भी बढ़कर बुलहवस (लम्पट) हूँ।

औरंग०—सुनो, मुझे मसखरापन पसन्द नहीं। तुम क्या काम कर सकते हो?

दिल०—कुछ नहीं। जँभाई ले सकता हूँ, अँगड़ाई ले सकता हूँ, कोई काम कराओ तो उसे बिगाड़ सकता हूँ, गाली-गलोज करो तो उसे समझ सकता हूँ,—और कुछ नहीं कर सकता।

औरंग०—जाने दो,—समझ गया। मुझे तुम्हारी ज़रूरत होगी। कुछ डर नहीं है।

दिल०—भरोसा भी नहीं है।

[वेश्याओंके साथ फिर मुरादका प्रवेश]

मुराद०—वाह वाह!—ये हूरें!—तुहफा है!

औरंग०—तो तुम अब दिलबस्तगी करो। मैं जाता हूँ। तुम्हारे मसखरेको भी लिए जाता हूँ। इसकी बातमें मुझे बड़ा मजा आता है।

मुराद—क्यों, आता है न? कहता तो हूँ, यह एक नायाब गौहर है। अच्छी बात है, इसे ले जाओ। मुझे इस वक्त इससे भी अच्छी सोहबत मिल गई।

(दिलदारको लेकर औरंगज़ेबका प्रस्थान)

मुराद—नाचो, गाओ।

नाचना-गाना

[तर्ज—मजा देते हैं क्या यार, तेरे बाल घूँघरवाले]

आये आये हैं हम यार, तुमको गले लगाने आये।
यह हुस्न, हँसी, यह गाना, जो कुछ है सो सब, जाना—
हम आज तुम्हें मनमाना, देंगे देंगे कर मन भाये ॥ आये० ॥
चरनोंमें फूल चढ़ायें, यह हार गलेमें पिन्हायें,
बन दासी तुम्हें रिझायें, अब तो सुखके बादल छाये ॥ आये०॥
ये ओंठ अमृतके प्याले, पी ले पी ले यार मजा ले।
सीनेसे खींच लगा ले, पूरा अर्मां बस हो जाये ॥ आये० ॥
तन मन धन जीवन सारा, हमने तुमपर है वारा।
हसरत सुख, प्यार हमारा, तुममें पूरा बस हो जाये ॥आये०॥
यह हवा चमनसे आती, खुश करती, खुशबू लाती।

वह जमना भी लहराती, अपना सुंदर रूप दिखाये ॥ आये० ॥
पी कहाँ पपीहा गाता, वह मीठी तान सुनाता ।
मन लोट-पोट हो जाता, ऐसी खिली चाँदनी पाये ॥ आये० ॥
इस खिली चाँदनीहीमें, मर जायँ अगर तो जीमें—
दुख होगा नहीं, उसीमें मरना जन्नतसे बढ़ जाये ॥ आये० ॥
तेरे कदमोंमें रहना, मरकर तुझको ही चहना ।
मुतलक न झूठ यह कहना, इसके सिवा न कुछ मन भाये ॥आये०॥
पड़ रहूँ नजरके नीचे, यह चाह यहाँतक खींचे ।
लाई हैं आँखें मींचे, हमको, बने न बिन अपनाये ॥ आये० ॥
कर दो सर्फराज तो आज, बस यह जबान चुप हो आज ।
प्यारे आशिकके सरताज, दिलवर दिलसे दिल मिल जाये॥आये०॥

(गाना सुनते सुनते मुराद का मद्यपान और धीरे धीरे आँखे बंदकर लेना)

(वेश्याओंका प्रस्थान)

[सिपाहियों सहित औरंगज़ेबका प्रवेश]

औरंगज़ेब—बाँध लो !

मुराद०—(चौंककर) कौन ? भाई ! यह क्या ! दगाबाजी ? (उठना)

औरंग०—अगर हाथ-पैर हिलावे, तो कत्ल कर डालो !—छोड़ो मत।

(सिपाही मुरादको कैद कर लेते हैं ।)

औरंग०—इसे आगरे ले जाओ । मेरे शाहजादे मुहम्मद सुलतान और शायस्ताखाँके हवाले कर देना । मैं रुक्का लिखे देता हूँ ।

मुराद—इसका बदला पाओगे —मैं तुमसे समझ लूँगा ।

औरंग०—ले जाओ ।

(हिरासतकी हालतमें मुरादका प्रस्थान)

औरंग०—या खुदा ! मेरा हाथ पकड़कर मुझे कहाँ लिये जा रहे हो ? मैं यह तख़्त नहीं चाहता था । तुम्हीने हाथ पकड़कर मुझे इस तख़्तपर बिठाया है । क्यों ? यह तुम्हीं जानो ।

दूसरा दृश्य

स्थान—आगरेके किलेका शाही महल

समय—प्रातःकाल

[अकेले शाहजहाँ]

शाह०—सूरज निकल आया: वैसा ही, जैसा चमकीला और सुर्ख रंगका हमेशा निकला करता है। आसमान वैसा ही नीला है: यह जमना उसी तरह इठलाती बल खाती हुई अपनी पुरानी चालसे कलोलें करती बह रही है; उस पारके दरख्तोंका नीला रंग वैसा ही नज़र आ रहा है। सब कुछ वैसा ही है जैसा कि मैं बचपनसे देख रहा हूँ। सिर्फ़ मैं ही बदल गया हूँ। (विषादके स्वरमें) मैं आज अपने ही बेटेकी हिरासतमें हूँ। मैं आज औरतोंकी तरह लाचार और बच्चोंकी तरह कमजोर हूँ। बीच बीचमें गुस्सेसे गरज उठता हूँ, लेकिन यह बे-मौसिमके बादलका गरजना—फिजूलका हाय हाय करना है। इस तरह कुढ़कुढ़कर मैं आप भीतर ही भीतर घुलता जा रहा हूँ। ओः! हिन्दोस्तानके बादशाह शाहजहाँकी आज यह हालत! (एक खंभेपर हाथ टेककर यमुनाकी ओर एकटक देखना)—यह कैसी आवाज़ है! यह! फिर! फिर!—यह कौन? जहानारा!

[जहानाराका प्रवेश]

शाह०—जहानारा, यह कैसा शोरो गुल है? यह फिर!—सुना? (उत्सुक भावसे) क्या दारा अपनी फौज और तोपें साथ लिये फतहयाब होकर आगरे लौट आया है? आओ बेटा! इस बेइन्साफी बेदर्दी और जुल्मका बदला लो।—क्यों जहानारा, आँखें क्यों मूँद लीं? समझा बेटी, यह दाराकी फतहयाबीकी खुशखबर नहीं है—यह और एक बुरी खबर है। ठीक कहता हूँ न?

जहा०—हाँ अब्बाजान!

शाह०—मै जानता हूँ, बदनसीबी अकेली नहीं आती; अपने साथ नई नई आफतें भी ले आती है। जब आफतोंका सिलसिला बँधा है, तो वह अपना पूरा जोर दिखाये बिना नहीं रह सकता। क्यों बेटी, कौन-सी बुरी खबर है ! यह कैसा शोरोगुल है ?

जहा०—औरंगजेब आज बादशाह होकर दिल्लीके तख़्तपर बैठा है। आगरेमें आज उसीका जल्सा है—उसीका यह शोरोगुल है।

शाह०—(जैसे सुना ही नहीं, इस ढंगसे) क्या ! औरंगजेब—उसने क्या किया ?

जहा०—वह आज दिल्लीके तख़्तपर बैठा है।

शाह०—जहानारा, तू क्या कह रही है ? मै जिन्दा हूँ, या मर गया ! औरंगजेब—नहीं—गैर-मुमकिन है। जहानारा, तेरे सुननेमें भूल हुई है। यह कहीं हो सकता है ! औरंगजेब—औरंगजेब यह काम नहीं कर सकता। उसका बाप अभीतक हयात है।—उसमें क्या कुछ भी समझ बाकी नहीं रही ? क्या उसकी आँखोंमें कुछ भी दुनियाकी शर्म नहीं है ?

जहा०—(काँपते हुए स्वरमें) जो शख्स बूढ़े बापको दगासे कैद कर सकता है और उसे 'जिन्दा-दर-गोर' बना सकता है, वह और क्या नहीं कर सकता ?

शाह०—तो भी—नहीं होगा ! ताज्जुब क्या है !—ताज्जुब क्या है !–यह क्या ! जमीनसे काला धुआँ निकलकर आसमानको चढ़ रहा है ! —आसमान स्याह हो गया ! शायद दुनिया उलट-पलट गई।—यह यह ! नहीं, क्या मै पागल हुआ जा रहा हू !—यह वही तो नीला आसमान है, वैसा ही साफ-सुथरा सुहावना सबेरेका वक्त है ? कुछ भी तो नहीं हुआ !—ताज्जुब ! (कुछ चुप रहकर) जहानारा !

जहा०—अब्बा !

शाह०—(गद्गदस्वरसे) तू बाहर क्या देख आई ?—दुनियाका काम क्या ठीक उसी तरह चल रहा है ? माताएँ अपनी औलादोंको दूध पिला रही हैं ? औरतें अपने शौहरोंका घर देख रही हैं ? नौकर मालिकोंकी खिदमत कर रहे हैं ? लोग फकीरोंको भीख दे रहे हैं ? देख आई—इमारतें वैसी ही खड़ी हैं ? रास्तेमें लोग चल रहे हैं ? आदमी आदमीको खा नहीं रहा ?—देख आई ? देख आई ?

जहा०—अब्बाजान, कमीनी दुनिया उसी तरह अपना काम कर रही। कैदी शाहजहाँका ख़याल किसीको नहीं है।

शाह०—हाँ ?—सचमुच ?—वे यह नहीं कहते कि यह बड़ा भारी जुल्म है ? वे यह नहीं कहते कि हमारे प्यारे रहमदिल गरीब-परवर शाहजहाँको किसकी मजाल है कि कैद कर रक्खे ? वे चिल्लाकर यह नहीं कहते कि हम बग़ावत करेंगे, औरंगजेबको पकड़कर कैद कर लेंगे, आगरेके किलेका फाटक तोड़कर अपने शाहजहाँको लाकर फिर तख़्तपर बिठावेंगे ?—यह नहीं कहते ? नहीं कहते ?

जहा०—नहीं अब्बा, दुनिया किसीके लिए नहीं सोचती। सबको अपनी अपनी पड़ी है। वे अपने अपने ख्यालमें ऐसे डूबे हुए हैं कि कल अगर सूरज न निकले, एक जबर्दस्त आग आसमानको जलाती हुई सूरजकी जगह दौरा करने लगे, तो वे उसीकी लाल रोशनीमें पहलेकी तरह अपना काम करते रहेंगे।

शाह०—अगर मैं एक दफा रिहाई पाकर किलेके बाहर जा सकता। जहानारा, मौका नहीं मिलता ? सिर्फ एक दफा तू छिपाकर मुझे किलेके बाहर ले जा सकती है ?

जहा०—नहीं अब्बा, बाहर हजारों हथियारबन्द सिपाही पहरा दे रहे हैं।

शाह०—तब भी कुछ हर्ज नहीं। एक दिन वे मुझे अपना बादशाह मानते थे। मैंने कभी उनसे बुरा बरताव नहीं किया। उनमें बहुतसे ऐसे होंगे जिन्हें रोजी देकर मैंने भूखों मरनेसे बचाया होगा—आफतोंसे छुड़ाया होगा—कैदसे रिहाई दी होगी। बदलेमें—

जहा०—नहीं अब्बा, इन्सान खुशामदी कुत्तेकी तरह खुशामदी होता है। जो गोश्तका एक छीछड़ा दे सकता है, उसीके पैरोंके पास खड़े होकर वह दुम हिलाने लगता है।—इतना कमीना है ! इतना नालायक है !

शाह०—तो भी मैं अगर एक दफा उनके पास जाकर खड़ा हो जाऊँ,—इन सफेद बालोंको बिखेरकर, कमजोरीसे काँपता हुआ मैं अगर जरीबका सहारा लेकर उनके आगे खड़ा हो जाऊ, तो उन्हें तरस न आवेगा ? रहम न आवेगा ?

जहा०—अब्बा, अब दुनियामें तरस और रहमका नाम नहीं रहा। खौफने उन्हें तहस-नहस कर डाला। जो आगे बढ़तीके जमानेमें 'जय बाद-

शाह शाहजहाँकी जय' के नारेसे आसमानको हिला देते थे, वे ही अगर आज आपकी इस जईफ मरीज मजबूर सूरतको देखें, तो इस मुँहपर थूक देंगे और मेहरबानी करके न थूकेंगे, तो नफरतके साथ मुँह फेरकर चले जायँगे ।

शाह०—ऐसी बात ! ऐसी बात !—(गम्भीर स्वरसे) अगर आज दुनियाकी यह हालत है, तो जरूर एक बड़ी भारी बला उसकी रगरगमें घुस गई है । तो फिर देर क्या है ? या खुदा ! अब उसे नेस्तनाबूद कर दो ! गला घोंटकर उसे अभी मार डालो ! अगर ऐसा ही है, तो ए आसमान ! अभीतक तेरा रंग नीला क्यों है ? सूरज ! तू अभीतक आसमानके ऊपर क्यों है ? बेहया ! नीचे उतर आ ! एक बड़े भारी तूफानमें तू चूरचूर हो जा ! भूचाल ! तू हुमककर इस जमीनकी छाती फाड़कर इसके टुकड़े टुकड़े उड़ा दे ! ए आग ! तू भभककर तमाम दुनियाको खाकमें मिला दे ! और, क्या ही अच्छा हो, अगर एक भारी आँधी आकर वही खाक खुदाके मुँहपर डाल आवे !

तीसरा दृश्य

स्थान---राजपूतानेकी मरुभूमिका एक किनारा

समय---दिन दोपहर

[पेड़के तले दारा, नादिरा और सिपर बैठे हैं----
पास ही जोहरतउन्निसा सो रही है ।]

नादिरा—प्यारे शौहर, अब नहीं चला जाता !—यहीं ज़रा आराम करो ।

सिपर—हाँ अब्बा । ओः, कैसी प्यास लगी है !

दारा—आराम ! नादिरा, दुनियामें हमारे लिए आराम नहीं है । यह ऊपर मैदान देखती हो, जिसे हम अभी तय करके आये हैं ।—देखती हो नादिरा !

नादिरा—देखती हूँ—ओः—

दारा—हमारे पीछे जैसा उजाड़ ऊसर है, हमारे सामने भी वैसा

ही है। पानी नहीं है, छाँह नहीं है, किनारा नहीं है—साँय साँय कर रहा है !

सिपर—अब्बा, बड़ी प्यास लगी है—ज़रा-सा पानी !

दारा—बेटा, पानी यहाँ नहीं है !

सिपर—अब्बा, पानी ! पानी न मिलेगा तो मै मर जाऊँगा।

दारा—(गुस्सेसे) हूँ !

नादिरा—देखो प्यारे, कहीं अगर जरा-सा पानी मिल सके तो लाओ ! बच्चा बेहोश हुआ जा रहा है। प्यासके मारे मेरा भी कलेजा मुँहको आ रहा है।

दारा—क्या सिर्फ़ तुम्ही लोगोका यह हाल है नादिरा ? प्याससे मेरा गला नहीं सूख रहा ? तुमको सिर्फ़ अपना ही ख्याल है।

नादिरा—प्यारे, मै अपने लिए नहीं कहती !—यह बेचारा—आहा—

दारा—मेरे भी कलेजेके भीतर एक आग लगी हुई है !—धाँय धाँय जल रही है। उसपर इस बेचारे बच्चेका सूखा हुआ मुँह देख रहा हूँ—मुँहसे बात नहीं निकलती—देखता हूँ—और नादिरा, क्या तुम समझती हो कि मेरे दिलपर सदमा नहीं पहुँचता ? लेकिन क्या करूँ—पानी नहीं है। कोस-भरके भीतर पानीकी बूँद भी नहीं है—नामो-निशान नहीं है।—ओः ! किस हालतमें मुझे डाल रक्खा है मेरे खुदा ! अब नहीं सहा जाता।

सिपर—अब्बा, अब नहीं रहा जाता !

नादिरा—आहा मेरे बच्चे—मै तुझपर कुर्बान जाऊँ—अब नहीं सहा जाता !

दारा—मरो—मरो—तुम सब मरो, मै भी मरूँ—आज यहीं हम सबका खातमा हो जाय !—हो जाय—यहीं हो जाय !

सिपर—अम्मी, ओः, बोला नहीं जाता। कैसी बेचैनी है अम्मी !

नादिरा—ओः, कैसी बेचैनी है !

दारा—नहीं, अब देखा नहीं जा सकता। मै आज खुदासे बदला लूँगा। उसकी इस सड़ी हुई थोथी दुनियाँको काटकर उसकी भारी बेइमानीका पर्दा-फाश कर दूँगा। मै मरूँगा, लेकिन उससे पहले अपने हाथसे तुम सबको कत्ल कर डालूँगा, तुमको मारकर मरूँगा !　　　　(कटार निकालकर)

सिपर—अम्मीको मत मारो—मुझे मार डालो !

नादिरा—ना—ना—मुझे पहले मारो। मेरे देखते तुम बच्चेकी छातीमें कटार न मारने पाओगे !—मुझे पहले मारो।

सिपर—नहीं अब्बा, मुझे पहले मारो !

दारा—यह क्या मेरे अल्लाह !—यह फिर—बीच-बीचमें क्या दिखाते हो ! गहरे अँधेरेके बीचमें यह कैसी रोशनीकी झलक ! या खुदा ! या रहीम तुम्हारे पैदा किये हुए इन्सान ऐसे खूब-सूरत, लेकिन ऐसे जल्लाद हैं !—इन मा-बेटोंका एक दूसरेको बचानेके लिए यह रोना—मगर तो भी कोई किसीको बचा नहीं सकता।—इतने जबर्दस्त लेकिन इतने कमजोर ! इतने ऊँचे, लेकिन इतने नीचे गिरे हुए !—यह रोना नहीं, आसमानसे पाक-साफ मोतियोंकी बारिश है। यह बहिश्त और दोजख एक साथ !—मेरे खुदा, यह कैसी पहेली है !

सिपर—अब्बा, अब्बा,—ओः ! (गिर पड़ता है।)

नादिरा—मेरा बच्चा ! (जाकर गोदमें उठा लेती है।)

दारा—यह फिर वही दोजख है,—ना-ना-ना यह रोशनीका वहम है ! यह शैतानी है ! यह दगा है ! अँधेरीकी ताकत दिखानेके लिए यह एक जलता हुआ अगारा है ! कुछ नहीं ! मैं तुम सबको कत्ल करूँगा ! फिर खुदकुशी करूँगा—! (जोहरतकी ओर देखकर) वह सो रही है। उसको भी मारूँगा। उसके बाद—तुम लोगोंकी लाशोंसे लिपटकर मैं भी जान दे दूँगा।—आओ, एक एक करके मेरे सामने आओ।

(नादिराको मारनेके लिए कटार खींचता है।)

सिपर—(होशमें आकर) मत मारो, मत मारो।

दारा—(सिपरको एक हाथसे दूर हटाकर कटार मारनेको तैयार होकर) मरनेके लिए तैयार हो जाओ।

नादिरा—मरनेसे पहले हमें जरा इबादत कर लेने दो।

दारा—इबादत ! किसकी ? खुदाकी ? खुदा नहीं है ! सब ढोंग है, धोखेबाजी है। खुदा नहीं है।—कहाँ है ?—कहाँ है ?—कौन कहता है, खुदा है ? अच्छा तो करो इबादत।

नादिरा—आ बच्चे, मरनेसे पहले खुदाकी याद कर ले।

(दोनों घुटने टेककर आँखें मूद लेते हैं।)

नादिरा—मेरे खुदा! मेरे रहीम! बड़े दुखमें आज तुम्हें पुकार रही हूँ। मालिक! दुख दिया, अच्छा किया। तुम जो दोगे, उसे हम सर-आँखोंसे कबूल करेंगे। तो भी, तो भी, मरते वक्त अगर लड़की-लड़के और प्यारे शौहरको खुश देखकर मर सकती!—

दारा—(देखते ही सहसा घुटने टेककर) या खुदा! तुम शाहोंके शाह हो! तुम नहीं हो, तो इतने बड़े इस दुनियाके कारखानेको चलाता कौन है? कहाँसे वह कायदा आया कि जिसके जोरसे ऐसी दो पाक चीजें दुनियामें नजर आती हैं,—मा और औलाद। या खुदा! तुमको मैंने अक्सर याद किया है, लेकिन ऐसे दुखमें, ऐसी आजिजीसे कलेजा थामकर, और कभी नहीं पुकारा। या रहीम!

[गऊ चरानेवाले एक मर्द और औरतका प्रवेश]

मर्द—तुम कौन हो?

दारा—यह किसकी आवाज़ है! (आँखें खोलकर) तुम लोग कौन हो? ज़रा-सा पानी, ज़रा-सा पानी दो!—मुझे न दो, इस औरत और—इस बच्चेको दो।

औरत—हाय हाय, बेचारे तड़प रहे हैं! मैं अभी पानी लाती हूँ। तनिक धीरज धरो भैया!　　(प्रस्थान)

मर्द—हाय हाय, बच्चेको साँस लेना कठिन हो रहा है!

दारा—जोहरत! जोहरत! मर गई।

मर्द—नहीं, अभी मरी नहीं है। कैसी प्यारी लड़की है!

दारा—जोहरत!

जोहरत—(क्षीण स्वरसे) अब्बा!

[ग्वालिनका प्रवेश। जल देना। सबका जल पीना]

औरत—आओ भैया, हमारे घर चलो।

मर्द—आओ भैया!

दारा—तुम कौन हो! तुम कोई फरिश्ते या देवता हो!—तुम्हें खुदा

ने भेजा है ?

मर्द—नहीं भैया, मै एक चरवाहा हूँ !—यह मेरी स्त्री है।

दारा—तुममें इतनी मुहब्बत, इतनी मेहरबानी है ! इन्सानमें इतना रहम ! आदमीमें इतनी हमदर्दी ! यह भी क्या मुमकिन है ?

मर्द—क्यों भैया, तुमने क्या कभी कोई आदमी नहीं देखा ? तुम हमेशा शैतानोंको ही देखते रहे हो ?

दारा—क्या यही ठीक है ? वे सब शैतान ही हैं ?

औरत—यह तो आदमी ही का काम है भैया। अनाथको आश्रय देना, भूखेको खिलाना, प्यासेको पानी पिलाना,—यह तो आदमी ही का काम है भैया। केवल शैतान ही ऐसा न करेगा।—पर मुझे यह विश्वास नहीं कि कभी कभी ऐसा करनेका शैतानका भी जी न चाहता हो।—आओ भैया !

(सब जाते हैं।)

चौथा दृश्य

स्थान—मुंगेरेके किलेका महल

समय—चाँदनी रात

[पियारा टहल-टहलकर गा रही है।]

आनन्द भैरवी, ठेका धमार

उलटा हुआ सारा काम।
घर बसाया चैनको, जाना न था अंजाम।
आगसे वह जल गया, बस मैं रही नाकाम॥ उलटा०॥
अमृत-सागरमें गई, गोता लगाया जाय।
विष हुआ तकदीरसे मेरे लिए वह हाय॥ उलटा०॥
भाग कैसे हैं, कहूँ क्या, ऐ सखी, सुन बात।
चाँद चिनगारी बरसता कर रहा उतपात॥ उलटा०॥

[शुजाका प्रवेश]

शुजा—तुम यहाँ हो ! उधर मैं तुम्हें न जाने कहाँ कहाँ ढूँढ़ आया।

(पियारा गाती है।)

छोड़ नीचेको चढ़ी ऊँचे बढ़ाकर पाँव।
अगम पानीमें गिरी, कोई चला नहिं दाँव॥ उलटा०॥

शुजा—उसके बाद तुम्हारी आवाज सुननेसे मालूम हुआ कि तुम यहाँ हो।

(पियारा गाती है।)

चाह लछमीकी मुझे थी, आह जीके साथ।
पासका भी रत्न खो, आई गरीबी हाथ॥ उलटा०॥

शुजा—बात सुनो—आः—

(पियारा गाती है)

प्यासकी मारी गई मैं, मेहके जो पास।
गिर पड़ी बिजली, न पूरी हुई मेरी आस॥ उलटा०॥

शुजा—सुनोगी नहीं ? तो मैं जाता हूँ।

(पियारा गाती है।)

ज्ञानदा कहे यों कन्हाईकी, मुझे यह प्रीत।
मरनेसे भी अधिक दुखदा, हुई उलटी रीत॥ उलटा०।

शुजा—आः, हैरान कर डाला ! मैं तो यही कहूँगा कि दुनियामें कोई मर्द दुबारा ब्याह न करे। दूसरी जोरू खसमके सिरपर सवार होती है। अगर तुम पहली जोरू होती, तो क्या तुम्हें एक बात सुनानेके लिए मुझे इतनी मिन्नतें करनी पड़तीं ?

पियारा—आः, मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर दिया ! मैं तो यही कहूँगी कि दुनियामें कोई औरत उस मर्दके साथ शादी न करे जिसकी एक जोरू मर चुकी हो। यह बात अगर न होती, तो तुम आकर मेरा ऐसा अच्छा गाना मिट्टी कर देते ? आः, परेशान कर डाला ! दिन-रात जंगकी

ही खबर सुननी पड़ती है ! फिर तुम न जानते हो कवायद (व्याकरण), न समझते हो गाना । परेशान कर डाला !

शुजा—यह तुमने कैसे जाना कि मै गाना नहीं समझता ?

पियारा—ऐसा अच्छा गाना ! अहाहाहा !

शुजा—अपने गानेमें आप ही मस्त हो रही हो !

पियारा—क्या करूँ, तुम तो समझते ही नहीं । इसीसे गानेवाला और सुननेवाला मै ही हूँ ।

शुजा—गलत है । 'गानेवाला-सुननेवाला' नहीं, 'गानेवाली-सुननेवाली' होगा ।

पियारा—(सिटपिटाकर) तभी तो, तुमने सब मिट्टी कर दिया !

शुजा—इस वक्त बात यह कहना है कि सुलेमान मुंगेरका किला छोड़कर चला गया है । क्यों, जानती हो ?

पियारा—(अनसुनी करके) वही तो !

शुजा—उसके बाप दाराने उसे बुला भेजा है । लेकिन इधर—

पियारा—(उसी भावसे) मुहाविरा ठीक है । कवायदकी ग़लती नही है ।

शुजा—अरे सुनो, दाराने दोनों बार औरंगज़ेबसे शिकस्त खाई है ।

पियारा—(उसी भावसे) मैने ग़लत नहीं कहा ।

शुजा—तुम बात नहीं सुनोगी ?

पियारा—पहले यह मान लो कि मुझसे कवायदकी ग़लती नहीं हुई ।

शुजा—जरूर ग़लती हुई है ।

पियारा—ग़लती बिलकुल नहीं हुई है ।

शुजा—चलो, किससे पूछोगी ? पूछो ।

पियारा—देखो, मैं कहती हूँ, आपसमें समझौता कर लो, नहीं तो मैं इसके लिये गजब ढा दूँगी । रात-भर चिल्लाऊँगी और देखूँगी कि तुम कैसे सोते हो । आपसमें समझौता कर लो ।

शुजा—तो फिर मेरी बात सुनोगी ?

पियारा—हाँ सुनूंगी ।

शुजा—तो तुमने गलती नहीं कहा।—खासकर इसलिए कि तुम मेरी दूसरी बीबी हो। अब सुनो, खास बात है। बेढब मामला है, तुमसे सलाह पूछता हूँ।

पियारा—सलाह! अच्छा ठहरो, मैं तैयार हो लूँ। (चेहरा और पोशाक ठीक करके) यहाँ कोई ऊँची जगह भी नहीं है। अच्छा, खड़े खड़े ही सुनूँगी। कहो, मैं तैयार हूँ।

शुजा—मुझे यकीन है कि अब अब्बा इस दुनियामें नहीं हैं।

पियारा—मेरा भी ऐसा ही खयाल है।

शुजा—जयसिंहने मुझे जो बादशाहके दस्तखत दिखाये थे वह सब दाराका जाल था।

पियारा—ज़रूर ही—।

शुजा—मानती हो?

पियारा—मानती में कुछ नहीं, कहते जाओ।

शुजा—दूसरी लड़ाईमें भी औरंगज़ेबसे दाराने शिकस्त खाई, यह तुमने सुना?

पियारा—हाँ सुना है।

शुजा—किससे सुना?

पियारा—तुमसे।

शुजा—कब?

पियारा—अभी!

शुजा—दारा आगरा छोड़कर भाग गये और औरंगज़ेबने फतह पा आगरेमें जाकर अब्बाको कैद कर लिया है। उसने मुरादको भी हिरासतमें रख छोड़ा है।

पियारा—हूँ!

शुजा—औरंगज़ेब अब मुझसे लड़ेगा।

पियारा—मुमकिन है।

शुजा—और औरंगज़ेबसे अब मेरी लड़ाई होगी, तो वह लड़ाई बड़ी भारी होगी।

पियारा—इसमें क्या शक है !

शुजा—मुझे उसके लिए अभीसे तैयार हो जाना चाहिए।

पियारा—जरूरी बात है !

शुजा—लेकिन—

पियारा—मेरी भी ठीक यही सलाह है। लेकिन—

शुजा—तुम क्या कह रही हो, मेरी समझमें नहीं आता।

पियारा—सच तो यह है कि उसे मैं भी बहुत अच्छी तरह नहीं समझ रही हूं।

शुजा—जाने दो तुमसे सलाह मांगना ही बेकार है।

पियारा—बिलकुल।

शुजा—लड़ाईका मामला तुम क्या समझोगी !

पियारा—मैं क्या समझूंगी !

शुजा—लेकिन इधर और एक मुश्किल आ पड़ी है।

पियारा—वह क्या ?

शुजा—मुहम्मदने तो मुझे साफ़ लिख दिया है कि वह मेरी लड़कीसे शादी नहीं करेगा।

पियारा—ठीक तो है: वह कैसे करेगा !

शुजा—क्यों नहीं करेगा ? मेरी लड़कीसे उसकी मँगनी पक्की हो गई है। अब बदलनेसे कैसे काम चल सकता है !

पियारा—या अल्लाह, सचमुच कैसे काम चल सकता है !

शुजा—लेकिन, अब वह ब्याह करनेको राजी नहीं है।

पियारा—ठीक तो है, कैसे राजी होगा !

शुजा—लिखा है, मैं अपने बापके दुश्मनकी लड़कीसे शादी नहीं करूंगा।

पियारा—कैसे करेगा !

शुजा—लेकिन इधर इससे मेरी लड़कीको बड़ा सदमा पहुंचेगा।

पियारा—वह तो पहुँचेगा हीं ! क्यों न पहुँचेगा।

शुजा—मैं क्या करूँ, कुछ समझमें नहीं आता।

पियारा—मेरा भी यही हाल है।

शुजा—अब क्या किया जाय ?

पियारा—हाँ, क्या किया जाय !

शुजा—तुमसे कोई मतलबकी बात पूछना बेकार है ।

पियारा—समझ गये ।—कैसे समझ गये ! हाँजी, कैसे समझ गये ! तुम बड़े समझदार हो !

शुजा—अब क्या करूँ ? औरंगजेबसे लड़ाई ! उसके साथ उसका बहादुर बेटा मुहम्मद है । सोचनेकी बात है । इसीसे सोच रहा हूँ । तुम क्या सलाह देती हो ?

पियारा—प्यारे, मेरा कहा सुनोगे ? सुनो तो कहूँ ।

शुजा—कहो, सुनूँगा ।

पियारा—तो सुनो । मैं कहती हूँ, लड़नेकी जरूरत नहीं है ।

शुजा—क्यों ?

पियारा—सल्तनत लेकर क्या होगा ? हमें किस चीज़की कमी है ? देखो, यह बंगालकी हरी-भरी धरती,—तरह तरहके फूलों, चिड़ियों और खूबसूरतियोंकी बहार । किसकी सल्तनत ! मैं तुमको अपने दिलके तख़्तपर बिठाकर पूज रही हूँ; उसके आगे तख्त-ताऊस क्या चीज़ है ! जब हम इस महलके ऊपरवाले बरामदेमें खड़े होते हैं, एक दूसरेके गलेसे गला लगा होता है,—हाथमें हाथ होता है, हम तरह तरहकी चिड़ियोंकी बोलियाँ सुनते हैं,—दूरतक फैली हुई वह गंगाकी धारा देखते हैं,—दूरतक फैले हुए नीले आसमानके ऊपर हम दोनों एक दूसरेकी हमशरीक और प्यारी नज़रोंकी नाव बढ़ाते चले जाते हैं, उस नीले रंगके एक सुनसान किनारेपर एक तरहकी खामोशी और खुशीकी फर्जी जगह मानकर, उसमें एक ख्वाबेगफलतके कुंजमें बैठकर, एक दूसरेकी तरफ एकटक देखते हैं,—दिलसे दिल मिलनेका मजा लूटते हैं,—तब क्या तुम्हें यह अहसास नहीं होता प्यारे, कि यह सल्तनत कोई चीज़ नहीं है ? प्यारे, यह लड़ाई अच्छी नहीं । हो सकता है कि हमारे पास जो नहीं वह भी हम न पावें, और जो है वह भी चला जाय !

शुजा—इससे तो तुमने और भी सोचमें डाल दिया । सोचते सोचते मेरा सिर फिर ही रहा था, उसपर,—नहीं बल्कि दाराकी हुकूमत मैं मान भी सकता

था: औरंगजेबकी,— अपने छोटे भाईकी—हुकूमत, कभी मंजूर न करूंगा। नहीं—कभी नहीं। (प्रस्थान)

पियारा—तुमसे कुछ कहना बेकार है। तुम बहादुर हो।—सल्तनतके लिए शायद तुम लड़ते भी नहीं, मगर लड़नेके लिए लड़ोगे। तुमको मैं खूब पहचानती हूँ, लड़ाईका नाम सुनकर तुम नाच उठते हो।

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—दिल्लीका शाही दरबार

समय—प्रातःकाल

[सिंहासनपर औरंगजेब बैठे हैं। उनके पास मीरजुमला, शायस्ताखाँ इत्यादि सेनापति, मंत्रीगण, जयसिंह, और शरीर-रक्षक लोग उपस्थित हैं। सामने राजा जसवंतसिंह खड़े हैं।]

जसवन्त०—जहाँपनाह, मैं आया था सुल्तान शुजाके विरुद्ध युद्ध करनेमें आपको अपनी सेनासे सहायता देने। पर यहाँ आकर अब यह मेरा विचार बदल गया,—अब सहायता देनेको जी नहीं चाहता। मैं आज ही जोधपुर को लौटा जा रहा हूँ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह, आपने नर्मदाकी लड़ाईमें मुरादकी मददकी थी, मगर इसके लिए मैं आपसे नाखुश नहीं हूँ। खैरख्वाहीका सुबूत मिलनेपर हम महाराजको अपना दियानतदार दोस्त समझेंगे।

जसवन्त०—जहाँपनाह प्रसन्न हों या अप्रसन्न, इससे जसवन्तसिंहका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। और मैं आज इस दरबारमें जहाँपनाहसे दयाकी भीख माँगने नहीं आया हूँ।

औरंग०—तो फिर महाराजाके यहाँ आनेका और क्या मतलब है?

जसवन्त०—मैं आपसे एक बार यह पूछने आया हूँ कि किस अपराधसे हमारे दयालु सम्राट् शाहजहाँ कैद हैं, और किस अधिकारसे आप उनके,—अपने पिताके—रहते उनके सिंहासनपर बैठे हैं?

औरंग०—इसकी कैफियत क्या आज मुझे महाराजाको देनी होगी?

जसवन्त०—दें न दें, आपकी इच्छा, मैं केवल आपसे पूछने आया हूँ।

औरंग०—किस मतलबसे ?

जसवन्त०—जहाँपनाह का उत्तर सुनकर मैं अपना कर्तव्य निश्चित करूँगा।

औरंग०— कैसे ? अगर मैं कैफ़ियत न दूँ तो ?

जसवन्त०—तो समझूँगा कि देनेके लिए जहाँपनाहके पास कुछ कैफ़ियत ही नहीं है।

औरंग०—आप जो चाहें समझें; उससे हमारा कुछ नफ़ा-नुकसान नहीं। औरंगज़ेब खुदाके सिवा और किसीके आगे अपने कामोंकी कैफ़ियत नहीं देता।

जसवन्त०—अच्छी बात है। तो खुदाके आगे ही कैफ़ियत दीजिएगा।

(जानेको उद्यत होना)

औरंग०—ठहरिए राजा साहब!—मैं कैफ़ियत न दूँगा, तो आप क्या करेंगे ?

जसवन्त०—भरसक बादशाह शाहजहाँको कैदसे छुड़ानेकी चेष्टा करूँगा। बस। छुड़ा सकूँगा या नहीं, यह दूसरी बात है; किन्तु अपना कर्तव्य मैं अवश्य करूँगा।

औरंग०—आप बगावत करेंगे ?

जसवन्त०—बगावत ! सम्राट्का पक्ष लेकर युद्ध करनेका नाम विद्रोह नहीं है। विद्रोह किया है आपने। हो सकेगा, तो मैं विद्रोहीको दण्ड दूँगा।

औरंग०—राजा साहब, अब तक मैं इम्तिहान ले रहा था कि आपकी हिम्मत कितनी है। पहले सुना था, पर इस वक्त देख रहा हूँ कि आप बड़े ही निडर हैं।—राजा साहब, हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगजेब जोधपुरके राजा जसवन्तसिंहकी दुश्मनीसे नहीं डरता। अगर आप चाहेंगे, तो मैदाने जंगमें और एक बार औरंगजेबको पहचान लेंगे।—मालूम हो गया, नर्मदाकी लड़ाईमें औरंगज़ेबको आपने अच्छी तरह नहीं पहचाना !

जसवन्त०—जहाँपनाह, नर्मदाके युद्धने ? आप उस विजयकी बड़ाई करते हैं ? जसवन्तसिंहने दया-धर्मका विचार करके आपकी थकी हुई निर्बल सेनापर आक्रमण नहीं किया। नहीं तो मेरी सेनाकी केवल फूँकहीमें औरंगज़ेब और उनकी सेना रुईकी तरह उड़ जाती। इतनी दयाके बदलेमें जसवन्त-

सिंह औरंगज़ेबकी दगाबाजीके लिए तैयार न था। यही उसका अपराध है।—जहाँपनाह, आज आप उसी जीतकी बड़ाई कर रहे हैं?

औरंग०—महाराजा जसवन्तसिंह, खबरदार! औरंगजेबकी सब्रकी भी हद है! खबरदार!

जसवन्त०—सम्राट्, आँखें किसे दिखाते हैं? आँखें दिखाकर आप जयसिंह जैसे आदमीको काबूमें कर सकते हैं। जसवन्तसिंहकी प्रकृति और ही है,—समझ लीजिएगा। जसवन्तसिंह आपकी लाल लाल आँखोंको आपके तोपके गोलोंकी ही तरह तुच्छ समझता है।

मीरजुमला—राजा साहब, यह कैसी बात है?

जसवन्त०—चुप रहो मीरजुमला! राजा राजाकी लड़ाईमें जंगली गीदड़को क्या अधिकार है कि वह उनके बीचमें पड़े? हममेंसे अभी कोई मरा नहीं। तुम्हारी बारी युद्धके बाद आती है,—तुम और यह शायस्ताखाँ—

(शायस्ताखाँ और मीरजुमलाका तलवार खींचना और 'खबरदार काफिर!' कहना)

शायस्ता०—जहाँपनाह, हुक्म हो!

(औरंगजेबका इशारेसे मना करना)

जसवन्त०—अच्छी जोड़ी मिली है,—मीर जुमला और शायस्तखाँ,—मन्त्री और सेनापति। दोनों नमकहराम हैं। जैसा मालिक, वैसा नौकर।

शायस्ता०—देखिए तो इस काफिरकी मजाल जहाँपनाह,—कि हिन्दोस्तानके बादशाहके सामने—

जसवन्त०—कौन भारतका सम्राट् है?

शायस्ता०—हिन्दोस्तानके बादशाह गाजी आलमगीर?

[बुर्का डाले हुए जहानाराका प्रवेश]

जहानारा—झूठ बात है। हिन्दोस्तानका बादशाह औरंगज़ेब नहीं है। हिन्दोस्तानके बादशाह शाहजहाँ हैं।

मीरजुमला—कौन है यह औरत?

जहानारा—कौन है यह औरत? यह औरत है बादशाह शाहजहाँकी लड़की जहानारा। (बुर्का उलटकर) क्यों औरंगज़ेब, तुम्हारा चेहरा एकाएक जर्द क्यों पड़ गया?

औरंग०—बहन, तुम यहाँ कहाँ?

जहानारा—मैं यहाँ क्यों आई, यह बात औरंगज़ेब, आज इस तख्तपर मजेसे बैठकर इन्सानकी आवाजमें पूछनेकी ताब तुममें है? औरंग- ज़ेब, मैं यहाँ आई हूँ बादशाहसे बगावत करनेके तुम्हारे जुर्मकी नालिश करने।

औरंग०—किससे?

जहानारा—खुदासे! खुदा नहीं है, यह तुमने सोच रक्खा है, औरंगज़ेब?

औरंग०—मैं यहाँ बैठकर उसी खुदाकी फकीरी कर रहा हूँ!

जहानारा—चुप रहो। खुदाका पाक नाम अपनी जबानसे न लो! जबान जल जायगी। बिजली और तूफान, भूचाल और बाढ़, आग और मरी! तुम सब लाखों बेगुनाह औरत-मर्दोंके घर उजाड़कर तोड़-फोड़कर बहाकर जलाकर तबाह करके चलेजाते हो, सिर्फ़ ऐसे ही लोगोंका कुछ नहीं कर सकते?

औरंग०—मुहम्मद, इस पागल औरतको यहाँसे ले जाओ। यह दरबार है, पागलखाना नहीं! मुहम्मद!

जहानारा—देखूँ, इस दरबारमें किसकी मज़ाल है जो बादशाह शाह- जहाँकी लड़कीके बदनपर हाथ लगावे।—वह चाहे औरंगज़ेबका लड़का हो या बज़ाते खुद शैतान।

औरंग०—मुहम्मद, ले जाओ।

मुहम्मद—मुआफ कीजिए अब्बाजान, मेरी इतनी मजाल नहीं।

जसवन्त०—बादशाहजादीके साथ किए हुए ऐसे बर्तावको हम नहीं सह सकते।

और सब—कभी नहीं।

औरंग०—सच है! गुस्सेमें कैसा अन्धा हो गया था कि अपनी बहन से, बादशाह शाहजहाँ की बेटीसे, ऐसा बर्ताव करनेका हुक्म दे [illegible] था। बहन, महलमें जाओ। इस आम दरबारमें, सैकड़ों बुरी नजरोंके [illegible]मने खड़ा होना मुनासिब नहीं,—बादशाह शाहजहाँकी लड़कीको यह जेबा नहीं देता। तुम्हारी जगह महलसरा है।

जहानारा—औरंगज़ेब, यह मैं जानती हूँ। लेकिन जब भा[illegible] भू-चालमें इमारतें गिर पड़ती हैं,—महलसरायें चूरचूर हो जाती हैं—तब [illegible]न औरतों को कभी सूरज-चाँदने भी नहीं देखा, वे भी बिना किसी लिहाजके खुली

सड़कपर आकर खड़ी हो जाती हैं। आज हिन्दुस्तानकी वही हालत है। आज एक भारी जुल्मसे एक सल्तनतकी इमारत मिसमार हो रही है। इस वक्त वह पिछला दस्तूर कायम नहीं रह सकता। आज जिस बेइंसाफी, जिस उथल-पुथल, जिस भारी और जुल्म शैतानियतका तमाशा हिन्दोस्तानमें हो रहा है, वह शायद कभी कहीं नहीं हुआ। इतना बड़ा गुनाह, इतना बड़ा फरेब, आज धरमके नामपर चल रहा है; और ये भेड़ें आँखें बन्द किये वही देख रही हैं। हिन्दोस्तानके आदमी क्या आज सिर्फ़ चाबुककी चोट पर चलनेके ही आदी हो गये हैं? बुराइयोंके बहावमें क्या इन्साफ, ईमान, इन्सानियत,—इन्सानके ऊँचे दर्जेके ख़यालात,—सब बह गये? इस वक्त क्या खुदगर्जीका ही राज है? क्या उसे ही सबने अपना धरम-करम मान लिया है? क्या यही मुनासिब है? सिपह-सालारो, वजीरो, मुसाहिबो, मैं यह जानना चाहती हूँ कि तुमने किस बूतेपर शाहँशाह शाहजहाँकी जिन्दगीमें ही उनके तख़्तपर उनके नालायक बेटे औरंगज़ेबको बिठला दिया है?

औरंगज़ेब—मेरी बहन अगर यहाँसे नहीं जाना चाहतीं, तो आप सब लोग बाहर चले जाइये। बादशाहजादीकी इज्जत बचाइए।

(सब बाहर जाना चाहते हैं।)

जहानारा—ठहरो। मेरा हुक्म है, ठहरो। मैं यहाँ तुम्हारे पास बेकार रोने नहीं आई हूँ। मै अपना कोई दुख भी तुम्हें सुनाने नहीं आई। मै अपने बूढ़े बापके लिए ही औरतकी शर्म हया और पर्देकी इज्ज़तको लात मारकर आई हूँ। सुनो।

सब—फर्माइए।

जहानारा—मै एक दफ़ा तुम्हारे रूबरू खड़े होकर तुमसे पूछने आई हूँ कि तुम अपने उस बहादुर, रहमदिल, गरीबपरवर बादशाह शाहजहाँको चाहते हो? या, इस दगाबाज, बापसे बगावत करनेवाले लुटेरे, शैतान औरंगज़ेबको?—याद रक्खो, अभी धरम दुनियासे उठ नहीं गया। अभी चाँद और सूरज निकलते हैं। अभी बाप-बेटेका रिश्ता माना जाता है। आज क्या एकही दिनमें, एकही आदमीके पापसे खुदाका बनाया कायदा उलट जायगा? यह नहीं हो सकता। ताकतको क्या इतना घमंड हो गया है कि उसकी फतहयाबीका डंका परस्तिशकी जगहके पाक अमन को लूट लेगा?

अधरमकी क्या ऐसी मजाल हो गई है कि वह बे-रोक-टोक मुहब्बतरहम-अदब की छातीके ऊपरसे अपनी गाड़ीके खूनसे तर पहिए चलाता चला जायगा ?—बोलो।—तुम औरंगज़ेबसे डरते हो ? औरंगजेब क्या है ? उसके दोनों हाथोंमें कितनी ताकत है ? तुम्हीं उसकी ताकत हो। तुम चाहो तो उसे तख़्त पर बैठा सकते हो; और चाहो तो उसे तख़्तसे उतारकर कीचड़में लुटा सकते हो। तुम अगर बादशाह शाहजहाँ को अब भी चाहते हो, शेरको बूढ़ा समझकर उसे लात मारना नहीं चाहते, तुम अगर इन्सान हो, तो मिलकर बलंद आवाज़से कहो, 'जय बादशाह शाहजहाँ की जय' देखोगे, औरंगज़ेब खौफके मारे आपही तख़्त छोड़ देगा।

सब—बादशाह शाहजहाँ की जय।

जहानारा—अच्छा तो—

औरंग०—(सिंहासनसे उतरकर) अच्छी बात है। मैंने तख़्त छोड़ दिया। मुसाहिबो, अब्बाजान बीमार हैं और सल्तनतका काम नहीं कर सकते। अगर वह कर सकनेके काबिल होते, तो दक्खिनसे मेरे यहाँ आनेकी ज़रूरत नहीं थी। मैंने बादशाह शाहजहाँके हाथसे सल्तनतका काम नहीं लिया,—दाराके हाथसे लिया है। अब्बा पहलेकी तरह सुखसे आरामके साथ आगरेके महलमें हैं। आप लोग अगर यह चाहते हो कि दारा बादशाह हो, तो कहिए, मैं उनको बुलाये लेता हूँ। दारा क्यों, अगर महाराजा जसवन्तसिंह बैठना चाहें, अगर वे या महाराज जयसिंह या और कोई सल्तनतके कामकी जिम्मेवारी लेनेको तैयार हो तो मुझे कुछ उज्र नहीं है। एक तरफ दारा, एक तरफ शुजा और एक तरफ मुराद है। इन दुश्मनोंको सिरपर रखकर कोई तख़्तपर बैठना चाहे, बैठे। मुझे यकीन था कि आप लोगोंकी रायसे और कहनेसे मैं यहाँ तख़्तपर बैठा हूँ। आप लोग यह न समझें कि तख़्त मेरे लिए इनाम है। यह मेरे लिए एक तरहकी सजा है। मैं इस वक्त तख्तपर नहीं बारूदकी ढेरपर बैठा हूँ। इसके सिवा इसी तख़्तकी वजहसे मैं मक्के जानेका सबाब नहीं हासिल कर पाता। आप लोग अगर चाहें कि दारा इस तख़्तपर बैठे, हिन्दोस्तानमें राजाके बिना फिर ऊधम मचे—धरमका नाश हो, तो मैं अभी मक्के शरीफका सफर करता हूँ। वह तो मेरे लिए बड़े सुखकी बात है। बोलो—

(सब चुप हो रहते हैं।)

औरंग०—यह लो, मैंने अपना ताज तख्तके आगे रख दिया। मैं इस तख्तपर बैठा हूँ आज—बादशाहके नामपर—लेकिन वह भी बहुत दिनोंके लिए नहीं। राजमें अमन-चैन कायम करके, दाराके बे-सिलसिले कामोंको सिलसिलेसे ठीक और सहल करके, फिर आप जिसे कहें उसे बादशाहत देकर मैं मक्के जाना चाहता हूँ। यहाँ बैठे रहनेपर भी मेरा ख़याल उधर ही है। वह मेरे जागतेका ख़याल और सोतेका ख्वाब है। मैं उसी पाक जगहके ख़यालमें डूबा रहता हूँ। आप लोग अगर यही चाहें, तो मैं आज ही सल्तनतकी जिम्मेदारी छोड़कर मक्के चला जाऊ। वह तो मेरे लिए बड़ी खुश-किस्मती है। मेरे लिए आप लोग कुछ फिक्र न करें। आप लोग अपनी तरफ ख़याल करके कहिए—जुल्म चाहते हैं या अमन? कहिए। मैं आप लोगोंकी मर्जीके खिलाफ बादशाहत करना पसन्द नहीं करता; और आपकी मर्जी होनेपर भी यहाँ खड़े खड़े दाराके मनमाने जुल्म न देख सकूँगा। कहिए, आप लोगोंकी क्या मर्जी है?—चलो मुहम्मद, मक्के चलनेके लिए तैयार हो जाओ।—बोलिए, आप लोगोंकी क्या मर्जी है?

सब—जय, बादशाह औरंगज़ेबकी जय।

औरंग०—अच्छी बात है, आप लोगोंका इरादा मालूम हो गया। अब आप लोग बाहर जायँ। मेरी बहनकी—शाहजहाँ बादशाहकी बेटीकी—बेइज्जती होना ठीक नहीं।

(औरंगज़ेब और जहानाराके सिवा सब जाते हैं)

जहानारा—औरंगज़ेब!

औरंग०—बहन!

जहानारा—खूब!—मुझसे तारीफ किये बिना नहीं रहा जाता। तब तक ताज्जुबसे चुप थी; तुम्हारी चालबाजीका तमाशा देख रही थी, जब होश आया तो देखा, तुम बाजी मार ले गये।—खूब!

औरंग०—मैं वायदा करता हूँ, अल्लाहकी कसम खाता हूँ, जबतक मैं बादशाह हूँ तब तक तुमको और अब्बाको किसी बातकी कमी न होने पावेगी।

जहानारा—फिर कहती हूँ—खूब!

———

तीसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—खजुवामें औरंगज़ेबका डेरा

समय—रात्रि

(औरंगज़ेब एक चिट्ठी लिये देख रहे हैं ।)

औरंग०—किश्त हाथीकी चाल । अच्छा—नहीं । उठती किश्तसे मेरी बाजी जाती रहेगी ! लेकिन—देखूं—ऊँहू !—अच्छा यह हाथीकी किश्त दबा लेगी ; उसके बाद यह किश्त । यह प्यादा—उसके बाद यह किश्त ! कहाँ जाओगे !—मात ! (उत्साहके साथ) मात (टहलते हैं ।)

[मीरजुमलाका प्रवेश]

औरंग०—वज़ीर साहब, हम इस जंगमें जीत गये ।

मीरजु०—जहाँपनाह, कैसे ?

औरंग०—पहले आप तोपें चलावेंगे । उसके बाद मैं हाथियोंको लेकर उस चौकन्नी फौजपर टूट पड़ूँगा । उसके बाद, मुहम्मदकी घुड़सवार फौज हमला करेगी । इन्हीं तीन किश्तोंसे दुश्मन मात हो जायगा ।

मीरजु०—और जसवन्तसिंह ?

औरंग०—उसपर मुझे अभी एतबार नहीं है । उसे अपनी आंखोंके सामने ही रखना होगा—हमारी और शुजाकी फौजोंके बीचमें; जिसमें वह हमें कुछ नुकसान न पहुँचा सके । मैं और मुहम्मद, दोनों उसके इधर-उधर रहेंगे । दुश्मनोंका हमला होगा ख़ासकर जसवन्तसिंहकी राजपूत-फौजके ऊपर । वे लड़ते खूब हैं । अगर उसमें कोताही करेंगे, तो पीछे तुम्हारी तोपोंकी बाढ़से काम लिया जायगा । हमें फतह जरूर मिलेगी ।—कल सबेरे तैयार रहना ।—इस वक्त जा सकते हो ।

मीरजु०—जो हुक्म । (प्रस्थान)

औरंग०—जसवन्तसिंह !—यह खाली इम्तिहान है ।

[मुहम्मदका प्रवेश]

औरंग०—मुहम्मद, तुम्हारी जगह है सामने, जसवन्तसिंहकी दाहिनी तरफ। तुम सबके पीछे हमला करना। सिर्फ़ तैयार रहना। यह देखो नक़शा!

[मुहम्मद देखता है।]

औरंग०—समझे?

मुहम्मद—हाँ अब्बाजान।

औरंग०—अच्छा जाओ।—कल तड़के! (मुहम्मदका प्रस्थान)

औरंग०—शुजाकी एक लाख फौज गँवार है। मालूम होता है, ज्यादह तकलीफ न उठानी पड़ेगी। एक दफा हलचल डालनेसे ही काम हो जायगा—यह लो, महाराज जसवन्तसिंह आ गये।

[दिलदारके साथ जसवन्तसिंहका प्रवेश और कोर्निश करना]

औरंग०—मैंने आपको बुला भेजा है। मैंने खूब सोचकर सामने ही रखना मुनासिब समझा है।

जसवन्त०—मुझे?

औरंग०—क्यों, इसमें कुछ उज्र है?

जसवन्त०—नहीं, मुझे कुछ आपत्ति नहीं है।

औरंग०—आप कुछ पसोपेश कर रहे हैं?

जसवन्त०—शाहजादे मुहम्मदके आगे रहनेकी बात थी।

औरंग०—मैंने राय बदल दी है। वह आपके दाहिने रहेगा।

जसवन्त०—और मीरजुमला?

औरंग०—आपके पीछे। मैं आपकी बाईं तरफ रहूँगा।

जसवन्त०—ओः समझ गया। जहाँपनाह मुझे सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं।

औरंग०—महाराज खुद होशियार हैं। महाराजके साथ होशियारीकी चाल चलना बेकार है। महाराजको मैं साथ लाया हूँ, उसका सबब यही है कि मेरी गैरहाजिरीमें आप आगरेमें बलवा न करा दें।—आप शायद यह अच्छी तरह जानते होंगे।

जसवन्त०—नहीं, इतना मैंने नहीं सोचा था। जहाँपनाह, मुझे अपने चतुर होनेका घमंड था। किन्तु मैं देखता हूँ, इस बातमें मैं जहाँपनाहके आगे बच्चा ही हूँ।

औरंग०—अब आपका क्या इरादा है ?

जसवन्त०—जहांपनाह, राजपूत लोग विश्वासघात करना नहीं जानते। परन्तु आप लोग--कमसे कम आप—उन्हें विश्वासघातकी राहपर चलानेकी चेष्टा कर रहे हैं। मगर जहाँपनाह, सावधान इस राजपूत जातिको अपना शत्रु बनाकर बिगाड़िएगा नहीं। मित्रतामें राजपूतके बराबर कोई मित्र नहीं और शत्रुतामें राजपूत जैसा भयंकर शत्रु भी नहीं।—सावधान!

औरंग०—राजा साहब, औरंगज़ेबके सामने भौंहोंमें बल डालनेसे कोई फायदा नहीं। जाइए। मेरा यही हुक्म है। इसीके मुताबिक काम कीजिएगा। नहीं तो—आप जानते हैं औरंगज़ेबको!

जसवन्त०—जानता हूँ। और आप भी जानते हैं जसवन्तसिंहको। मैं किसीका नौकर या ताबेदार नहीं हूँ। मै इस आज्ञाका पालन नहीं करूँगा।

औरंग०—राजा साहब यकीन कीजियेगा, औरंगज़ेब कभी किसीको मुआफ नहीं करता! समझ-बूझकर काम कीजिएगा!

जसवन्त०—और आप भी निश्चय जानिएगा कि जसवन्तसिंह कभी किसीसे नहीं डरता। सोच-समझकर काम कीजिएगा!

औरंग०—यह भी क्या मुमकिन है!—जसवन्तसिंह!

जसवन्त०—औरंगज़ेब!

औरंग०—अगर मै तुम्हें इसी दम कैद कर लूँ, तुम्हें कौन बचाएगा?

जसवन्त०—यह तलवार। समझ लो, इस दुर्दिनमें भी महाराज जसवन्तसिंहके एक इशारेसे तीस-हज़ार राजपूतोंकी तलवारें एक साथ सूर्यकी किरणोंमें चमक उठती हैं और इस गये गुजरे समयमें भी राजपूत राजपूत ही हैं। (प्रस्थान)

औरंग०—निशाना चूक गया। ज़रा आगे बढ़ गया। इस राजपूतोंकी कौमको अच्छी तरह पहचान नहीं सका। उनमें इतनी शान है! इतना घमंड है! नहीं पहचान सका।

दिलदार०—पहचानोगे कैसे जहाँपनाह! आप चालबाजीकी दुनियामें ही रहते हैं। आप देखते आ रहे हैं सिर्फ़ धोखेबाजी, खुशामद, नमकहरामी। उन्हें काबू करना आपके बायें हाथका खेल है। लेकिन यह एक जुदा ही ढंगकी दुनिया है। इस दुनियाके लोग जानसे बढ़कर शानको समझते हैं।

औरंग०—हूँ।—देखूं, अब भी अगर कुछ इलाज कर सकूं। लेकिन जान पड़ता है, अब मर्ज लाइलाज हो गया है, हिकमत काम नहीं कर सकती। (प्रस्थान)

दिलदार०—दिलदार! तुम घुसे थे सुई होकर—अब कहीं कुल्हाड़ी होकर न निकलो, मुझे यही डर है। पहले सबक लेनेवाला! उसके बाद मसखरा! उसके बाद राज-काजके ढंगोंका जानकार! उसके बाद शायद दानिशमंद (दार्शनिक)—उसके बाद?

[बातें करते करते औरंगज़ेब और मीरजुमलाका फिर प्रवेश]

औरंग०—सिर्फ़ यह देखते रहना कि कुछ नुकशान न पहुँचा सके।

मीर०—जो हुक्म।

औरंग०—उसकी आँखें बहुत सुर्ख हो गई थीं। एकदम जानका खौफ़ नहीं है। राजपूतोंकी कौम ही ऐसी है।

मीर०—मैंने देखा है जहाँपनाह, एक तोपसे बढकर एक राजपूत खौफ़नाक होता है।

औरंग०—देखना, खूब होशियार रहना।

मीर०—जो हुक्म।

औरंग०—ज़रा मुहम्मदको मेरे पास भेज देना—नहीं, मैं ही उसके डेरेमें जाता हूँ। (प्रस्थान)

मीर०—इस जंगमें औरंगज़ेब जैसे घबराये हुए हैं, वैसे पिछली किसी जंगमें नहीं घबराये। भाई-भाईकी लड़ाई है—इसीसे शायद यह बात है।—ओः! भाई-भाईका झगड़ा—कैसा कुदरती कानून के खिलाफ काम है! कैसे कड़े जीका काम है!

दिल०—और कैसा जोश दिलानेवाला है! यह नशा सब नशोंसे बढ़कर है। वजीर साहब, यह किसी तरह मेरी समझमें नहीं आता कि दुश्मनी बढ़ानेके लिये इन्सानने क्यों इतने मज़हब बनाये—जब घर हीमें ऐसे बड़े-बड़े दुश्मन मौजूद हैं। क्योंकि भाईके बराबर दुश्मन कोई नहीं है!

मीर०—क्यों?

दिल०—यह देखिए, वजीर साहब, हिन्दू और मुसलमान, इनका एक दूसरेसे क्या मेल मिलता है? पहले खुदाके दिये हुए चेहरेको ही लीजिए,

उसे खींच-तानकर जहाँतक बदला गया वहाँतक बदल डाला । मुसलमान रखते हैं दाढ़ी सामने,—हिन्दू रखते हैं चोटी पीछे (वह भी सामने न रखेंगे) । मुसलमान पच्छिमको मुँह करके नमाज़ पढ़ते हैं, हिन्दू लोग पूरबको मुँह करके पूजा-पाठ करते हैं । ये लाँग नहीं लगाते, वे लोग लगाते हैं । ये दाहिनी तरफसे लिखते हैं, वे बाईं तरफसे लिखते हैं ।—लिखते हैं कि नहीं ?

मीर०—लिखते हैं ।

दिल०—तब भी यह कहना पड़ेगा कि हिन्दू लोग मुसलमानोंकी अमलदारीमें एक तरहसे सुखसे हैं । वे और सब कुछ मान सकते हैं, लेकिन अपने किसी भाईकी हुकूमत नहीं मान सकते !

(मीरजुमला का हास्य)

दिल०—(जाते जाते) क्यों ठीक है न ?

मीर०—(जाते जाते) हाँ ठीक है ।

दूसरा दृश्य

स्थान—खेजुवामें शुजाका डेरा

समय—सन्ध्या

[शुजा एक नक़शा देख रहे हैं । पियारा फूलोंकी माला हाथमें लिये हुए गाती हुई प्रवेश करती है ।]

पियारा का गान

गजल

सुबहसे मैंने ये बैठे बैठे, बनाई माला है जान मेरी ।
डालूँ तुम्हारे गलेमें आओ, सुहाई माला है जान मेरी ॥
सुबहसे मैंने नहीं किया कुछ, लगा हुआ जी इसीमें था बस ।
बकुल-तले बैठकर निराले, बनाई माला है जान मेरी ॥
सुना रहा तान था पपीहा, कहीं छिपा डालियोंमें बैठा ।
उसीमें होकर मगन वहीं पर, बनाई माला है जान मेरी ॥

हवासे हिलती थीं डालियाँ सब, खुशीसे ज्यों झूमने लगी थीं।
वही खुशी ले यहाँ हूँ आई, बनाई माला है जान मेरी॥
सुबहकी जैसी हँसी छिटककर, सुनहली रंगत पड़ी चमनमें।
उसीमें मैंने निहाल होकर, बनाई माला है जान मेरी॥
न सिर्फ़ हैं फूल इसमें प्यारे, हवाका गाना चमनका खिलना,
खुशी सुबह की मिलाके मैंने, बनाई माला है जान मेरी॥
सभीसे बढ़कर हँसी तुम्हारी, मिली है इस में, इसीसे इसको
गलेमें पहनो, तुम्हारे कारन बनाई माला है जान मेरी॥

(माला शुजाके गलेमें डालती है ।)

शुजा—(हँसकर) पियारा, यह क्या मेरे लिए जयमाल है ? मैंने तो अभी फ़तहयाबी नहीं हासिल की।

पियारा—इससे क्या होता है ! मेरे नज़दीक तुम सदा फतहयाब हो। तुम्हारी मुहब्बतके क़ैदख़ानेमें मै क़ैद हूँ। तुम मेरे मालिक हो, मै तुम्हारी जर-खरीद लौडी हूँ। क्या हुक्म है ? (घुटने टेकती है ।)

शुजा—यह तो तुमने एक बड़े मजेका नया ढंग निकाला ।—अच्छा जाओ कैदी, मैंने तुमको रिहाई दी।

पियारा—मै रिहाई नहीं चाहती, मुझे यह गुलामी ही पसंद है।

शुजा—सुनो। मै एक सोचमें पड़ा हूँ।

पियारा—वह सोच है क्या ? देखूँ, अगर मै उसको मिटानेकी कुछ तरकीब कर सकूँ।

शुजा—(युद्धका नकशा दिखाकर) देखो पियारा, यहाँ पर मीरजुमला की तोपें हैं, यहाँ पर मुहम्मदके पाँच-हज़ार सवार हैं, और इस जगहपर खुद औरंगज़ेब है ।

पियारा—कहाँ ? मै तो सिर्फ़ एक कागज देख रही हूँ। और तो कुछ भी नहीं देख पड़ता।

शुजा—इस वक़्त इसी तरह है। लेकिन इस लड़ाईके वक़्त कौन कहाँपर रहेगा— यह कहा नहीं जा सकता।

पियारा—कुछ कहा नहीं जा सकता।

शुजा—औरंगज़ेबका दस्तूर यह है कि जैसे ही उसकी तरफ तोपके

गोले बरसाये जाते हैं, ठीक वैसे ही वह घोड़ा दौड़ाए आकर हमला करता है।

पियारा—हाँ, तब तो यह मामूली या सहल बात नहीं है।

शुजा—तुम कुछ नहीं समझती।

पियारा—जान गये!—कैसे जान गये? हाँ—बताओ न, किस तरह जान गये? ताज़्जुब है, बिलकुल ठीक जान गये।

शुजा—मेरी फौज़ कवायद नहीं जानती। अगर जसवन्तसिंहको मिला सकूँ—एक दफा लिखकर देखूँगा। लेकिन—अच्छा, तुम क्या कहती हो?

पियारा—मैंने तुमसे कहना सुनना छोड़ दिया है।

शुजा—क्यों?

पियारा—तुमसे कुछ कहो, तो तुम उसे कभी सुनते नहीं। मैं तुमको अच्छी तरह पहचानती हूँ। तुम जो ठान लेते हो वह ठान लेते हो। मुझसे मेरी राय पूछते जरूर हो, लेकिन अपने खिलाफ़ राय सुनते ही चिढ़ जाते हो।

शुजा—वह—हूँ जो चाहे समझो।

पियारा—इसीसे मैं पतिव्रता हिन्दू औरतकी तरह हूँ-हाँ करके टाल देती हूँ।

शुजा—सच है। कुसूर मेरा ही है। मैं सलाह माँगता जरूर हूँ, मगर ठीक सलाह न होनेसे चिढ़ जाता हूँ।—तुमने ठीक कहा। लेकिन अब सुधारनेकी कोई तदवीर नहीं है?

पियारा—नहीं। सुधारनेकी कोई तदवीर होती, तो मैं तुम्हें सुधारती। इसीसे मैं इसका जतन नहीं करती। मौज़से गाना गाती हूँ।

शुजा—गाना ही गाओ। तुम्हारा गाना एक तरहकी शराब है। सैकड़ों फिक्रों और तकलीफोंको दूर कर देता है। कड़ी वारदातोंको दुनियासे उड़ा ले जाता है। तब मुझे जान पड़ता है, जैसे एक सुरकी झनकार मुझे घेरे हुए है। यह आसमान, वह दुनिया, कुछ नहीं देख पड़ता। गाओ—कल लड़ाई होगी। बहुत देर है। जो होना है वही होगा। गाओ।

पियारा—तो वह गाना सुननेके लिए पहले इस पूरे चाँदकी चाँदनीमें अपनी तबियतको नहला लो। अपनी ख़्वाहिशके फूलोंपर मुहब्बतका चन्दन छिड़क लो—उसके बाद मैं गाना गाऊँ—और तुम अपने वे फूल मेरे पैरोंपर चढ़ाओ!

शुजा—हाः हाः हाः! तुमने खूब कहा—हालाँकि मैं तुम्हारी इस

मिसालका ठीक तौरसे रस नहीं ले सका।

पियारा—चुप। मैं गाना गाऊँ, तुम सुनो। पहले इस जगहपर सहारा लेकर इस तरह बैठो। उसके बाद, हाथको इस जगह इस तरह रक्खो। उसके बाद, आँखे मूँदो—जैसे ईसाई लोग इबादतके वक्त आँखें मूँदते हैं—हालाँकि मुँहसे कहते हैं कि "या खुदा, हमें अँधेरेसे रोशनीमें ले चल"—लेकिन असलमें खुदाने जितनी रोशनी दी है, आँखे मूँदकर उससे भी हाथ धो बैठते हैं।

शुजा—हाः हाः हाः! तुम बहुत-सी बाते करती हो, लेकिन जब इन बगला-भगतोंका ठट्ठा उड़ाती हो, तब वह जैसा मीठा लगता है—क्योंकि मैं कोई धरम ही नहीं मानता।

पियारा—'कवायद' की गलती है। 'जैसा' कहनेपर उसके साथ ज़रूर एक 'वैसा' कहना चाहिए।

शुजा—दारा हिन्दू-धरमका तरफदार है—बना हुआ है। औरंगज़ेब कट्टर मुसलमान है—वह भी ढोंगी है। मुराद भी मुसलमान है—कट्टर नहीं है—पर ढोंगी है।

पियारा—और तुम कोई भी धरम नहीं मानते—तुम भी बने हुए हो।

शुजा—कैसे?—मैं किसी धरमका दिखावा नहीं करता। मैं साफ साफ कहता हूँ कि मैं बादशाह होना चाहता हूँ।

पियारा—तुम्हारा यही ढोंग है।

शुजा—ढोंग कैसे है? मैं दाराकी हुकूमत माननेको राजी था। लेकिन औरंगज़ेब और मुरादकी हुकूमत नहीं मान सकता। मैं उनका बड़ा भाई हूँ।

पियारा—ढोंग है—बड़ा भाई होना भी ढोंग है!

शुजा—कैसे? मैं पहले जो पैदा हुआ था।

पियारा—पहले पैदा होना भी ढोंग है और पहले पैदा होनेमें तुम्हारी बहादुरी भी कुछ नहीं है। उसकी वजहसे तुम तख़्तपर ज्यादह दावा नहीं कर सकते।

शुजा—क्यों?

पियारा—हमारा बावर्ची रहमतउल्ला तुमसे बहुत पहले पैदा हुआ होगा, तो फिर तख्तपर तुमसे बढ़कर उसका दावा है।

शुजा—वह तो बादशाहका बेटा नहीं है?

पियारा—बादशाहका बेटा बननेमें कितनी देर लगती है ?

शुजा—हाः हाः हाः ! तुम इसी तरहकी बहस करोगी ? नहीं, तुम गाना गाओ—अगर हो सके तो ।

पियारा—सुनो । लेकिन खूब मन लगाकर सुनो—(गाती है ।)

ठुमरी

मन बाँध लिया किस बन्धनमें, दिलदार दिलारा साँवरिया ।
मैं जा न सकूँ उसे तोड़ कहीं, मुझे कैद किया मुझे मोह लिया ॥ मन०
दिलचस्प छिपी हुई बेड़ी है ये, यह कैद है प्यारी प्रान-प्रिया ।
चले जानेमें पैर रुके, न बढ़े, बिरहाकी कथा कसकावै हिया ॥ मन०
मिलनेकी हँसी खुशी और वही एक प्यारमें सब दुख दूर किया ।
इस कैदमें राहत चाहतकी मिलती है मुझे सुख पाये जिया ॥ मन०

शुजा—पियारा, खुदाने तुमको क्यों बनाया था ? यह रूप, यह तबियत, यह मसखरापन, यह गाना; ऐसी एक नायाब अजीब चीज़ खुदाने इस सख़्त दुनियामें क्यों पैदा की ?

पियारा—तुम्हारे लिए प्यारे !

तीसरा दृश्य

स्थान—अहमदाबाद, दाराका डेरा

समय—रात

दारा—ताज्जुब है ! जो दारा एक दिन सिपाहसालारों और राजा-महाराजाओंपर हुक्म चलाता था, वह एक जगहसे दूसरी जगह भागता हुआ आज दूसरेके दरवाजेपर रहमका तालिब है; और उसके दरवाजेपर, जो औरंगज़ेब और मुरादका ससुर है । मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरी इतनी तनज्जुली होगी ।

नादिरा—क्या शाहजादे सुलेमानकी कुछ खबर पाई है ?

दारा—उसकी खबर वही एक है । राजा जयसिंह उसे छोड़कर मय फौजके औरंगज़ेबसे मिल गये हैं । बेचारा शाहजादा कुछ बचे हुए अपने

साथियोंके लिए—उन्हें फौज नहीं कह सकते—हरिद्वारके रास्ते मेरे पास लाहौर आ रहा था। राहमें औरंगज़ेबकी फौजके कुछ सिपाहियोंने उसका पीछा किया और उसे वे श्रीनगर (काश्मीर) के किनारे तक खदेड़ ले गये। सुलेमान इस वक्त श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहके यहाँ पड़ा हुआ अपनी जान बचा रहा है। क्यों नादिरा, रो रही हो?

नादिरा—नहीं।

दारा—नहीं, रोओ। कुछ तसल्ली हो जायगी! हाय मैं अगर रो भी सकता।

नादिरा—फिर औरंगज़ेबसे लड़ाई करोगे?

दारा—करूँगा। जबतक इस तनमें जान है, औरंगजेबकी हुकूमत कभी न मानूँगा। लड़ूँगा। वह मेरे बूढ़े बापको कैद करके आप तख़्तपर बैठा है। मैं जब तक अब्बाको छुड़ा न सकूँगा, लड़ूँगा।—नादिरा, सिर क्यों झुका लिया? मेरा यह इरादा शायद तुमको पसंद नहीं है।—क्या करूँ—

नादिरा—नहीं प्यारे, तुम्हारी राय ही मेरी राय है। तुम्हारी मर्जी ही मेरी मर्जी है। मगर—

दारा—मगर?

नादिरा—प्यारे, हमेशा यह खटका, यह सफर, यह भागना किसलिए है?

दारा—क्या करूँ बताओ? जब मेरे पाले पड़ी हो तब सहना ही पड़ेगा।

नादिरा—मैं अपने लिए नहीं कहती मालिक। मैं तुम्हारे ही लिए कहती हूँ। जरा आईनेमें अपना चेहरा देखो प्यारे, यह हड्डियोंका ढाँचा रह गया है। ये सफेद बाल और उदास फीकी नज़र—

दारा—आज अगर मेरा यह चेहरा तुम्हें नापसन्द हो; तो मैं क्या कर सकता हूँ।

नादिरा—मैं क्या यही कह रही हूँ?

दारा—औरतोंका स्वभाव ही यह है।—तुम्हारा क्या! तुम सिर्फ़ सिफारिश, फर्माइश और नालिश कर सकती हो। तुम हम लोगोंके सुखमें रुकावट और दुखमें बोझ हो।

नादिरा—(भर्राई हुई आवाज़से) प्यारे, सचमुच क्या यही बात है? (हाथ पकड़ती है।)

दारा—जाओ, इस वक्त तुम्हारा यह भिनभिनाना अच्छा नहीं लगता। (हाथ छुड़ाकर चल देता है)

नादिरा—(कुछ देरतक आँखोंमें रूमाल लगाये रहकर विषादके गंभीर स्वरमें) मेरे रहीम ! बस अब और नहीं।—यहींपर पर्दा गिराकर यह खेल खत्म कर दो। सल्तनत गँवाई, महलोंके ऐश छोड़कर चली आई, रास्तेमें धूप सही, सर्दी सही, सोई नहीं, खाना नहीं खाया,-इसी तरह बहुत-से दिन गुजारने पड़े और रातें काटनी पड़ीं; सब हँसते हँसते सह लिया, क्योंकि शौहरका प्यार बना हुआ था। लेकिन आज (कण्ठरोध), बस अब नहीं। अब नहीं ! सब सह सकती हूँ, सिर्फ़ यही नहीं सह सकती। (रोती है।)

[सिपरका प्रवेश]

सिपर—अम्मी, यह क्या ? तुम रो रही हो अम्मीजान !

नादिरा—नहीं बेटा, मै रोती नहीं। ओः सिपर ! सिपर ! (रोती है।)

सिपर—(पास आकर नादिराके गलेमें हाथ डालकर आँखोंसे रूमाल हटाता है) अम्मी, रोती क्यों हो ? किसने तुम्हें चोट पहुँचाई है ? मैं उसे कभी मुआफ न करूँगा—मै उसे—

(इतना कहकर सिपर नादिराके गलेसे लिपटकर छातीमें सिर रखकर रोता है। नादिरा उसे छातीसे लगा लेती है।)

[जोहरतउन्निसाका प्रवेश]

जोहरत—यह क्या !—अम्मी रो क्यों रही है सिपर ?

नादिरा—ना जोहरत, मैं रोती नहीं हूँ।

जोहरत—अम्मी, तुम्हारी आँखोंमें आँसू तो मैने कभी नहीं देखे। चाँदनीकी तरह हँसी हमेशा तुम्हारे होठोंमें बसी रहती थी। भूखकी तकलीफमें, नींद न आनेकी बेचैनीमें, बुरे दिनोंमें सच्चे दोस्तकी तरह हँसी तुम्हारी होठोंसे लगी ही रहती थी। आज यह क्या है अम्मी ?

नादिरा—यह सदमा जबानसे कहा नहीं जा सकता जोहरत, आज मेरे खुदाने मुझसे मुँह फेर लिया।

[दाराका फिर प्रवेश]

दारा—नादिरा, मुझे मुआफ करो, मुझसे कसूर हुआ। बाहर जाते ही मुझे होश आया। नादिरा—(नादिराका जोरसे रोना)

दारा—नादिरा, मैं अपना कुसूर कुबूल करता हूँ ! मुआफी माँगता हूँ। तब भी—छिः ! नादिरा, अगर तुम जानतीं, अगर समझ सकतीं कि दिन रात मेरे जिगरमें कैसी आग सुलगा करती है—तो तुम मेरे इस बर्तावसे बुरा न मानतीं।

नादिरा—और प्यारे, अगर तुम जानते कि मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ तो, तुम इतने सख़्त न हो सकते।

सिपर—(अस्फुट स्वरमें) मैं तुम्हें देवताकी तरह मानता हूँ अब्बा !

(जोरहतका प्रस्थान)

नादिरा—नहीं बेटा, तुम्हारे अब्बाने मुझे कुछ नहीं कहा। मैं ही जरा ज्यादह तुनुक-मिजाज़ हूँ—मेरा ही कुसूर है !

[बाँदीका प्रवेश]

बाँदी—बाहर एक साहब आपसे मिलनेके लिए खड़े हैं, खुदावन्द !

दारा—कौन है ?

बाँदी—मालूम हुआ कि गुजरातके सूबेदार हैं।

दारा—सूबेदार आये हैं ?

नादिरा—मैं भीतर जाती हूँ। (प्रस्थान)

दारा—उन्हें यहाँ ले आओ सिपर !

(बाँदीके साथ सिपरका प्रस्थान)

दारा—देखूँ, शायद यहाँ सहारा मिल जाय।

[शाहनवाज और सिपरका प्रवेश]

शाहनवाज—शाहजादे साहब, तसलीम।

दारा—बन्दगी सुल्तान साहब।

शाहनवाज—जहाँपनाहने मुझे याद किया है ?

दारा—हाँ सुलतान साहब, मैंने आपसे मिलनेकी ख़्वाहिश की थी।

शाहन०—क्या हुक्म है ?

दारा—हुक्म ! सुलतान साहब, वह दिन अब नहीं रहा। आज आजिजी करने, भीख माँगने आया हूँ। हुक्म देगा अब—औरंगजेब।

शाहन०—औरंगज़ेब ! उसका हुक्म मेरे लिए नहीं है।

दारा—क्यों सुलतान साहब, आज तो औरंगज़ेब हिन्दुस्तानका बादशाह है ?

शाहन०—हिन्दुस्तानका बादशाह औरंगज़ेब ! जो फ़क़ीरी और रिआया-परवरीका मस्नुई चेहरा लगाकर बूढ़े बापके खिलाफ बगावत करता है, बनावटी मुहब्बतका चेहरा लगाकर भाईको कैद करता है, दिखावटी दीनका चेहरा लगाकर तख्तपर बैठता है—वह बादशाह है ? मैं एक अंधे-लूले-अपाहिजको उस तख्तपर बैठाकर उसे बादशाह मानकर कोर्निश करनेको तैयार हूँ, लेकिन औरंगज़ेबको नहीं ।

दारा—यह क्या सुलतान साहब ! औरंगज़ेब आपका दामाद है ।

शाहन०—औरंगज़ेब अगर मेरा दामाद न होकर मेरा बेटा होता और वह बेटा अकेला ही होता, तो भी मैं उसे छोड़ देता । अधरम और बेईमानीको जिन्दगी रहते मैं कभी कबूल नहीं कर सकता !

दारा०—तब आपने क्या ते किया है ?

शाहन०—मैं शाहजादे दाराकी तरफसे लड़ूँगा। पहलेहीसे उसकी तैयारी कर रहा हूँ । इस थोड़ी-सी फौजको लेकर औरंगज़ेबसे लड़ सकना गैरमुमकिन है; इसीसे और फौज जमा कर रहा हूँ ।

दारा—किस तरह ?

शाहन०—महाराजा जसवन्तसिंहसे मददकी माँग की है ।

दारा—उन्होंने मदद देना मंजूर कर लिया है ?

शाहन०—कर लिया है ।—कोई डर नहीं है शाहजादा साहब, आइए —आप आज मेरे मेहमान हैं। आप बादशाहके बड़े बेटे हैं । आप उनके पसंद किये हुए वालिए-मुल्क हैं । मैं एक बूढ़ा आदमी होने पर भी शाही खान्दानका ईमानदार खादिम हूँ । बूढ़े बादशाहके लिए मैं जंग करूँगा । फतह न मिलेगी, जान तो दे सकूँगा ! बूढ़ा हुआ हूँ, एक सवाब करके आकबत तो बना लूँ !

दारा—तो आप मुझे सहारा देते हैं ?

शाहन०—सहारा शाहजादे, आजसे मेरा घर-बार सब आपका है । मैं शाहजादेका गुलाम हूँ ।

दारा—आप वली अल्लाह (महात्मा) हैं ।

शाहन०—शाहजादे साहब मैं वली नहीं, एक मामूली आदमी हूँ। और आज जो मैं कर रहा हूँ, उसे मैं कोई गैर मामूली काम नहीं समझता। शाहजादे साहब, मेरी इतनी उम्र आई है—मैं जोर देकर कह सकता हूँ कि जान कर मैंने कभी कोई अधरम नहीं किया। लेकिन साथ ही अच्छे काम भी ज्यादह नहीं किये। आज अगर मौका हाथ लगा है, तो एक अच्छे कामको क्यों जाने दूँ?

(दोनोंका प्रस्थान)

[जोहरतउन्निसाका फिर प्रवेश]

जोहरत—मैं इतनी नाचीज, निकम्मी और नाकाम हूँ! अब्बाके किसी काम नहीं आती, सिर्फ एक बोझ हूँ!—हायरे निकम्मी औरतोंकी जात। मा-बापकी यह हालत देखती हूँ, पर कुछ कर नहीं सकती। बीच बीचमें सिर्फ गर्म आँसू बहाती हूँ।—लेकिन मैं चाहे जो हो, कुछ करूँगी, कुछ जो पहाड़की चोटीसे कूदनेकी तरह दिलेरीका और कत्लकी तरह खौफनाक काम होगा। देखूँ।

चौथा दृश्य

स्थान—काश्मीर। राजा पृथ्वीसिंहका आराम-बाग

समय—संध्या

[सुलेमान अकेला टहल रहा है।]

सुलेमान—इलाहाबादसे भागकर आखिर इस दूर पहाड़ी मुल्क काश्मीरमें आना पड़ा। अब्बाको मदद देनेके लिए निकला। कुछ न कर सका।—यह मुल्क बड़ा ही खूबसूरत और अच्छा है।—जैसे एक जमा हुआ गाना—एक मुसव्विरका खींचा हुआ ख्वाब, एक खुमारीसे भरा हुआ हुस्न—। गोया बहिश्तकी एक हूर आसमानसे उतर सैर करनेसे थकके, पैर फैला बर्फके पहाड़का (हिमालयका) सहारा लेकर, बाईं हथेलीपर गाल रक्खे हुए, नीले

आसमानकी तरफ ताक रही है।—यह गानेकी आवाज कैसी सुनाई देती है!

(दूरपर गाना सुन पड़ता है)

सुलेमान—यह गानेकी आवाज़ तो धीरे धीरे पास ही आती जाती है।—वे एक सजी हुई नावपर बैठी हुई कई औरतें खुद डाँड़ चलाती हुई इधर ही आ रही हैं।—कैसा अच्छा, कैसा मीठा गाना है!

[एक सजे हुए बजरेपर शृङ्गार किये हुए स्त्रियोंका प्रवेश और गाना]

विहाग—तिताला

समय सब यों ही बीता जाय।
आवेगा सँग कौन हमारे, आये सो आ जाय॥ समय०॥
छोटा बजरा सजा हमारा, हिलता डुलता जाय।
जुही चमेलीके हारोंका हिलना रहा लुभाय॥ समय०॥
फहराती रेशमी पताका धीमी हवा सुहाय।
नदिया भीतर बालम बजरा हिलता डुलता जाय॥ समय०॥
प्रेमी नये मुसाफिर सारे नये प्रेमको पाय।
मगन उसीमें लगन लगाये हिये न प्रेम समाय॥ समय०॥
मुँहमें हँसी लसी आँखोंमें रही खुमारी छाय।
बहते जाते प्रेम-पंकमें दुनिया दूर बहाय॥ समय०॥
पश्चिमका आकाश देखिए सन्ध्याकाल सुहाय।
यह लाली अनुराग सरीखी जीमें रही समाय॥ समय०॥
मधुर स्वप्न-सा उधर चाँद वह देख पड़े छबि छाय।
उमँग भरी नदिया लहराती कल-धुनि रही सुनाय॥ समय०॥
सीतल मंद सुगंध पवनमें बंसी-धुनि सरसाय।
छुटे फुहारा हर्ष-हँसीका लीजे गले लगाय॥ समय०॥

१ स्त्री—ऐ सुन्दर नौजवान, आप कौन हैं?

सुले०—मैं दारा शिकोहका लड़का सुलेमान हूँ।

१ स्त्री—बादशाह शाहजहाँके लड़के दारा शिकोह!—उनके बेटे हैं आप?

सुले०—हाँ, मैं उनका बेटा हूँ।

१ स्त्री—और मैं कौन हूँ, यह तुमने नहीं पूछा सुलेमान?—मैं

काश्मीरकी मशहूर नाचने-गानेवाली राजाकी प्यारी रंडी हूँ। ये मेरी सहेलियाँ हैं !—आओ, हमारे साथ इस नावपर।

सुले०—तुम्हारे साथ ? हाय बदनसीब औरत, किसलिए ?

१ स्त्री—सुलेमान, तुम इतने नन्हें नादान नहीं हो। तुम हमारे पेशेको तो जानते हो ?

सुले०—जानता हूँ। जानता हूँ, इसीसे तुमपर मुझे इतना तरस है। यह रूप, यह जवानी क्या पेशेकी चीज़ है ? रूप तन है, मुहब्बत उसकी जान है। ऐ औरत, बेजानके तनको लेकर मैं क्या करूँगा ?

१ स्त्री—क्यों ? हम क्या प्यार-मुहब्बत करना नहीं जानतीं ?

सुले०—जानोगी कहाँसे बताओ ! जिन्होंने हुस्नको बाजारकी चीज़ बना रक्खा है, जो अपनी हँसी तक खरीददारके हाथ बेचती हैं, वे प्यार करेंगी किस तरह ? प्यार तो सिर्फ़ देना ही चाहता है—वह सखी (दानी) का ही सुख है—भला उस सुखको तुम किस तरह समझ सकोगी मैया !

१ स्त्री—तो हम क्या कभी किसीको प्यार नहीं करतीं ?

सुले०—करती हो—तुम प्यार करती हो—जरदोजी पगड़ीको, हीरेकी अँगूठीको, कामदार जूतेको, हाथीदाँतकी छड़ीको। तुम प्यार कर सकती हो—घुँघराले बालोंको, बड़ी बड़ी आँखोंको, खूबसूरत चेहरेको, लाल लाल होठोंको। मेरा यह खूबसूरत चेहरा और गोरा रंग देखा है, या मैं बादशाहका पोता हूँ—यह सुना है, इसीसे शायद आशिक हो गई हो। यह तो प्यार नहीं है। प्यार होता है दो दिलोंमें।—जाओ मैया !

२ स्त्री—राजा साहब आ रहे हैं।

१ स्त्री—आज ऐसे बेवक्त ?—चलो।—ऐ जवान ! तुम इसका फल पाओगे।

सुले०—क्यों खफा होती हो मैया ? तुम लोगोंसे मुझे नफरत या दुश्मनी नहीं है। सिर्फ तरस आता है।— (गाते गाते स्त्रियोंका प्रस्थान)

सुले०—कैसे ताज्जुबकी बात है।—यह हूरोंका हुस्न, यह आँखोंकी चमक, यह अदा, यह कोयलका गला—इतना खूबसूरत—मगर इतना गंदा !

(टहलता है)

[श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहका प्रवेश]

राजा—शाहजादे, अफसोस !

सुले०—क्यों राजा साहब ?

राजा—मैंने तुम्हें विपत्तिमें निराश्रय देखकर आश्रय दिया था; और भर-सक सुखसे रक्खा था। तुम्हारे लिए मैंने औरंगजेबकी सेनासे युद्ध भी किया।

सुले०—राजा साहब, मैंने कभी इससे इनकार नहीं किया।

राजा—इस समय भी शायस्ताखाँ बादशाहकी ओरसे—तुम्हें पकड़वा देनेके लिए—बहुत कुछ कह सुन रहे थे—लालच दिखा रहे थे। मैं तब भी राजी नहीं हुआ।

सुले०—मैं आपका हमेशा अहसानमन्द रहूँगा।

राजा—मगर तुम ऐसे ओछे, खोटे और बदमाश हो, यह मैं न जानता था।

सुले०—यह क्या राजा साहब !

राजा—मैंने तुम्हें अपने महलके बाहरके बागमें टहलनेके लिए छोड़ दिया था। तुम वहाँसे भीतर आरामबागमें घुसकर मेरी रखैलसे हँसी दिल्लगी करोगे, यह मुझे मालूम न था।

सुले०—राजा साहब, आपको धोखा हुआ।

राजा—तुम सुन्दर, नौजवान, शाहजादे हो। मगर इसीसे इस—

सुले०—राजा साहब, मैं—

राजा—जाओ शाहजादे ! सफाई देना बेकार है।

(दोनोंका दो ओर प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान--प्रयाग, औरंगज़ेबका डेरा

समय--रात

[औरंगज़ेब अकेले]

औरंग०--कैसे जीवटका आदमी यह राजा जसवन्तसिंह है ! खजुवाके मैदाने-जंगमें पिछली रातको मेरी बेगमोंके डेरों तकको लूटकर एक बाढ़की तरह मेरी फौजके ऊपरसे चला गया !—ताज्जुब ! जो हो शुजासे इस लड़ाई-में जीत गया।—लेकिन उधर फिर काली घटा उठ रही है। और एक आँधी आवेगी। शाहनवाज और दारा। साथ जसवन्तसिंह भी है। खतरेकी जगह है। अगर—नहीं, वह न करूँगा। इस जयसिंहकी मार्फत ही करना होगा।—यह लो, राजा साहब आ ही गये।

[जयसिंहका प्रवेश]

जय०—जहाँपनाहने मुझे याद किया है ?

औरंग०—हाँ, मैं आपकी राह देख रहा था। आइए—ओः शिद्दतकी गर्मी पड़ रही है !

जय०—बड़ी गर्मी है।

औरंग०—मेरे बदनसे जैसे आगकी चिनगारियाँ निकल रही हैं।—आपकी तबीयत तो अच्छी है ?

जय०—जहाँपनाहकी मेहरबानीसे बन्दा बहुत अच्छा है।

औरंग०—देखिए राजा साहब, मैं कल सबेरे दिल्लीको लौटूँगा, आप भी मेरे साथ लौटेंगे न ?

जय०—जैसी आज्ञा हो—

औरंग०—मैं चाहता हूँ, आप मेरे साथ चलें।

जय०—जो आज्ञा, मैं आठों पहर तैयार हूँ। जहाँपनाहकी आज्ञाका पालन करनेहीमें मुझे आनन्द है।

औरंग०—सो जानता हूँ राजा साहब। आप जैसा दोस्त इस दुनियामें मुश्किलसे मिलेगा। आपको मैं अपना दाहिना हाथ समझता हूँ।

(जयसिंह सलाम करते हैं।)

औरंग०—राजा साहब, बड़े अफसोसकी बात है कि महाराज जसवन्तसिंह मेरा डेरा और रसद लूटकर ही चुप नहीं हैं। वे बागी शाहनवाज और दाराके साथ मिल गये हैं।

जय०—उनकी मूर्खता है।

औरंग०—मैं अपने लिए अफसोस नहीं करता। राजा साहब ही अपनी शामत आप बुला रहे हैं।

जय०—बड़े दुखकी बात है।

औरंग०—ख़ासकर आप उनके जिगरी दोस्त हैं। आपकी खातिर मैंने उनकी गुस्ताखी मुआफ की। यहाँ तक कि मैं उनकी लूट-पाटको भी मुआफ करनेके लिए तैयार हूँ—सिर्फ़ आपके लिहाजसे—अगर वे अब भी चुप होकर बैठ जायँ।

जय०—मैं क्या एक दफा उनसे मिलकर कहूँ ?

औरंग०—कहनेसे अच्छा होगा। मुझे आपके लिए फिक्र है। वे आपके दोस्त हैं, इसीलिए मैं उन्हें अपना दोस्त बनाना चाहता हूँ। उन्हें सजा देनेमें मुझे बड़ी तकलीफ होगी।

जय०—अच्छा, मैं उनसे मिलकर कहूँ ?

औरंग०—हाँ कहिएगा। और यह भी जता दीजिए कि अगर वे इस लड़ाईमें किसीकी तरफ न होंगे तो आपकी खातिर उनके सब कुसूर मुआफ कर दूँगा, और उन्हें गुजरातका सूबा तक देनेको तैयार हूँ—सिर्फ़ आपकी खातिर।

जय०—जहाँपनाह उदार हैं। मैं उन्हें जरूर राजी कर सकूँगा।

औरंग०—देखिए, वे आपके दोस्त हैं। आपका फर्ज़ है उन्हें बचाना।

जय०—ज़रूर।

औरंग०—तो अब आप जाइए राजा साहब। दिल्ली रवाना होनेकी तैयारी कीजिए।

जय०—जो आज्ञा। (प्रस्थान)

औरंग०—'सिर्फ़ आपकी खातिर।'—ढंग तो बुरा नहीं रहा! यह राजपूतोंकी क़ौम बहुत सीधी और जरा सी फैयाजी दिखानेसे काबूमें आजाने वाली होती है।—मैं इस फनको भी मश्क कर रहा हूं।—बड़ा ख़ौफनाक यह मेल है।—शाहनवाज और जसवन्तसिंह—लेकिन मैं यहाँपर खटका खाता हूँ इस अपने लड़के मुहम्मदसे। उसका चेहरा—(गर्दन हिलाना) कम बोलता है। मेरे बारेमें बेएतबारीका बीज न जाने किसने उसके जीमें बो दिया है। क्या जहानाराने ऐसा किया है?—वह लो, मुहम्मद आ ही गया।

[मुहम्मदका प्रवेश]

मुहम्मद—अब्बा, आपने मुझे बुला भेजा है?

औरंग०—हाँ, मैं कल दिल्लीको लौट रहा हूं। तुम शुजाका पीछा करना। मीरजुमलाको तुम्हारी मददके लिए छोड़े जाता हूं।

मुह०—जो हुक्म अब्बा।

औरंग०—अच्छा जाओ।—खड़े हो! इस बारेमें कुछ कहना है?

मुह०—नहीं अब्बा, आपका हुक्म ही काफी है।

औरंग०—तो फिर?

मुह०—मेरी एक अर्ज है अब्बाजान!

औरंग०—क्या?—चुप क्यों हो गये? कहो बेटा!

मुह०—बहुत दिनसे पूछ-पूछ कर रहा हूं। अब यह शक अपने दिलमें दबाकर रखना दुश्वार हो गया है। बेअदबी मुआफ हो।

औरंग०—कहो।

मुह०—अब्बा, बादशाह शाहजहाँ क्या कैद हैं?

औरंग—नहीं, कौन कहता है?

मुह०—तो फिर वे किलेके महलमें क्यों रोक रक्खे गये हैं?

औरंग०—इसकी ज़रूरत आ पड़ी है।

मुह०—और छोटे चाचा—उन्हें भी इस तरह कैद रखनेकी ज़रूरत है?

औरंग०—हाँ।

मुह०—और बाबाजानकी मौजूदगीमें आपके तख़्तपर बैठनेकी भी ज़रूरत है ?

औरंग०—हाँ बेटा।

मुह०—अच्छा ; (इतना ही कहकर सिर झुका लेता है)

औरंग०—बेटा, सल्तनतके मुआमले बड़े टेढ़े होते हैं। इस उम्रमें तुम उनको नहीं समझ सकोगे। इसकी कोशिश मत करो।

मुह०—अब्बाजान, धोखेसे भोले भाईको क़ैद करना, मुहब्बत करनेवाले मेहरबान बापको तख़्तसे उतारना, और दीनकी दुहाई देकर इस तख़्तपर बैठना—इसे अगर राजनीति कहते हैं, तो वह राजनीति मेरे लिए नहीं है।

औरंग०—मुहम्मद, तुम्हारी तबीयत क्या कुछ ख़राब है ? ज़रूर ऐसी बात है !

मुह०—(काँपती हुई आवाज़में) नहीं अब्बा, फिलहाल मुझ जैसा तन्दुरुस्त आदमी शायद हिन्दोस्तानमें और न होगा।

औरंग०—फिर !— (मुहम्मद चुप रहता है)

औरंग०—बेटा, मेरे ऊपर तुम्हारे दिलमें जो एतबार था, उसे किसने डिगा दिया ?

मुह०—खुद आपने। अब्बाजान, जब तक मुमकिन था, मैं आँख मूँदकर आपपर एतबार करता रहा। लेकिन अब ग़ैर-मुमकिन है। शकका जहर मेरी रग-रगमें फैल गया।

औरंग०—यही तुम्हारी सआदतमंदी है !—हो सकता है।—चिरागके तले ही अँधेरा होता है।

मुह०—सआदतमंदी !—अब्बाजान, सआदतमंदी क्या आज मुझे आपसे सीखनी होगी ? सआदतमंदी !—आपने अपने बूढ़े बापको क़ैद करके जो तख़्त छीन लिया है, उसी तख़्तको मैंने सआदतमंदीके ख़यालसे ही लात मार दी है। सआदतमंदी ! अगर सआदतमंद न होता, तो आज दिल्लीके तख़्तपर औरंगज़ेब न बैठते, बैठता यही मुहम्मद।

औरंग०—यह तो जानता हूँ बेटा, इसीसे ताज्जुब कर रहा हूँ।—इस सआदतमंदीको न गँवाना बेटा !

मुह०—ना, अब मुमकिन नहीं है। बापका लिहाज और सआदतमंदी बहुत बड़ी और बहुत ही पाक चीज़ है। लेकिन उससे बढ़कर भी कोई ऐसी चीज़ है, जिसके आगे बाप-मा-भाई सब छोटे होते जाते हैं।

औरंग०—मैं कहता हूँ बेटा, सआदतमंदी न गँवाना ! देखो, आगे चलकर यह सल्तनत तुम्हारी ही होगी।

मुह०—अब्बा, मुझे आप सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं ? मैं आपसे कह चुका हूँ कि अपने फर्ज़का खयाल करके मैंने तख़्त-ताजको लात मार दी। बाबाजान उस दिन यही सल्तनतका लालच दिखा रहे थे, आज आप फिर उसी सल्तनतका लालच दिखा रहे हैं। हाय ! दुनियामें सल्तनत क्या ऐसी बेश-कीमत चीज है ? और तमीज क्या ऐसी सस्ती है ? सल्तनतके लिए तमीज-को (विवेकको) लात मार दूँ ? अब्बा, आपने तमीजके खिलाफ जो सल्तनत हासिल की है, वह सल्तनत क्या आकबतमें आपके साथ जायगी ?—लेकिन अगर आप तमीजको न छोड़ते, तो वह आपके साथ जाती।

औरंग०—मुहम्मद !

मुह०—अब्बा !

औरंग०—इसके क्या माने ?

मुह०—इसके माने यह हैं कि मैंने आपके लिए सब गँवा दिया—आज आपको भी अपने भीतर खोजकर नहीं पाता—शायद आपको भी मैंने गँवा दिया। आज मुझ जैसा कंगाल कौन है !—और आपने—आपने यह हिन्दो-स्तानकी सल्तनत जरूर पाई है।—लेकिन इससे बढ़कर सल्तनत गँवा दी।

औरंग०—वह सल्तनत कौन-सी है ?

मुह०—मेरी सआदतमंदी !—वह कैसा रतन, वह कैसी दौलत थी—जिसे आपने खो दिया, यह आज आपकी समझमें नहीं आता। जान पड़ता है, एक दिन समझमें आ जायगा। (प्रस्थान)

[औरंगजेब धीरे धीरे दूसरी ओर जाते हैं]

———

छठा दृश्य

स्थान—जोधपुरका महल

समय—दोपहर

[जसवन्तसिंह और जयसिंह]

जय०—मगर इस रक्तपातसे आपको लाभ ?

जसवन्त०—लाभ ? लाभ कुछ भी नहीं।

जय०—तो इस वृथा रक्तपातकी क्या जरूरत है, जब यह निश्चय है कि इस युद्धमें औरंगजेबकी ही जय होगी ?

जसवन्त०—कौन जाने !

जय०—क्या आपने औरंगजेबको किसी युद्धमें हारते देखा है ?

जसवन्त०—नहीं। औरंगज़ेब वीर पुरुष है, इसमें सन्देह नहीं। उस दिन मैंने नर्मदा-युद्धके बीच उसे घोड़ेपर सवार देखा था। उस दृश्यको मैं इस जीवनमें कभी न भूलूँगा। वह मौन था, उसकी दृष्टि तीक्ष्ण और भौंहोंमें बल पड़े हुए थे। उसके चारों ओर तीर, गोले, बरस रहे थे, पर उधर उसका ध्यान ही न था। मैं उस समय विद्वेषके कारण जल रहा था, मगर मन ही मन उसे साधुवाद दिये बिना भी मुझसे नहीं रहा गया। औरंगज़ेब वीर है।

जय०—फिर ?

जसवन्त०—मैं नर्मदा-युद्धके अपमानका बदला चाहता हूँ।

जय०—औरंगज़ेबके डेरे लूटकर तो आपने उसका बदला चुका लिया।

जसवन्त०—नहीं, यथेष्ट नहीं हुआ। क्योंकि उस रसदकी कमीका पूरा करना औरंगज़ेबको क्या खलेगा। अगर लूटकर चला न आता, शुजासे मिल जाता, तो खेजुवाके युद्धमें शुजाकी हार न होती। अथवा आगरेमें आकर बादशाह शाहजहाँको कैदसे छुड़ा देता, तब भी एक बात थी। बड़ा धोखा हो गया।

जय०—पर इससे आपको क्या लाभ होता ? बादशाह दारा हों, शुजा हों, या औरंगज़ेब ही हों—आपका क्या !

जसवन्त०—बदला। मैं उन सबको विष दृष्टिसे देखता हूँ। परन्तु सबसे अधिक विषदृष्टिसे देखता हूँ—इस शठ औरंगज़ेबको।

जय०—फिर खेजुवाके युद्धमें आपने उनका पक्ष क्यों लिया था?

जसवन्त—उस दिन दिल्लीके शाही दरबारमें उसकी सब बातोंपर मैंने विश्वास कर लिया था। उसने एकाएक ऐसा बढ़िया ढोंग रचा, ऐसा स्वार्थ-त्यागका अभिनय किया, ऐसी हृदयकी दीनता प्रकट की कि मैं अचम्भेमें आ गया। मैंने सोचा, यह क्या! मेरी जन्मकी धारणा, मेरा प्रकृतिगत विश्वास क्या सब भूल ही है! ऐसे त्यागी, महत्, उदार, धार्मिक, पुरुषको मैंने अपनी कल्पनासे पापी समझ रखा था! ऐसा जादू फेर दिया कि सबसे पहले मैं ही 'जय औरंगज़ेबकी जय!' कहकर चिल्ला उठा; उसकी उस दिनकी वह जय—नर्मदाके या खेजुवाके युद्धसे भी अद्भुत है। किन्तु उस दिन खेजुवाकी युद्ध-भूमिमें फिर असली औरंगजेब देख पड़ा—वही कपटी, शठ, कुचक्री औरंगजेब नज़र आया।

जय०—महाराज, खेजुवाके मैदानमें आपसे रूखा बर्ताव करनेके कारण बादशाहको बड़ा पछतावा है। ऐसा अपराध कभी कभी सबसे हो जाता है। बादशाहको पीछेसे यथार्थ ही पश्चात्ताप हुआ था।

जसवन्त०—राजा साहब, आप मुझसे इसपर विश्वास करनेके लिए कहते हैं?

जय०—मगर वह बात जाने दीजिए: बादशाह उसके लिए आपसे क्षमा भी नहीं चाहते और क्षमा प्रार्थना करवाना भी नहीं चाहते। वे समझते हैं, आपके पिछले आचरणसे उस अन्यायका बदला चुक गया। वे आपकी सहायता नहीं चाहते। वे चाहते हैं कि आप दाराका भी पक्ष न लीजिए और औरंगज़ेबका भी पक्ष न लीजिए। इसके बदलेमें वह आपको गुजरातका सूबा दे देंगे। आप एक कल्पित अपमानका बदला लेनेमें अपनी शक्तिका क्षय करके मोल लेंगे, औरंगज़ेबकी शत्रुता और हाथ समेटे अलग बैठ रहनेसे उसके बदलेमें पावेंगे, एक बड़ा भारी सूबा गुजरात। छाँट लीजिए। अपना सर्वस्व देकर अगर शत्रुता खरीदना चाहते हैं, तो खरीदिए। यह महज रोजगारकी बात है, सिर्फ बेचना-खरीदना है।—देख लीजिए!

जसवन्त०—मगर दारा—

जय०—दारा आपके कौन हैं ? वे भी मुसलमान हैं, औरंगज़ेब भी मुसलमान है। आप अगर अपने देशके लिए युद्ध करने जाते तो मैं कुछ कहता ही नहीं। मगर दारा आपके कौन हैं ? आप किस लिए राजपूत जातिका रक्तपात करने जा रहे हैं ? दाराकी ही अगर विजय हो, तो उससे आपका क्या लाभ है, आपकी जन्मभूमिका ही क्या लाभ है ?

जस०—तो आइए, हम देशके लिए युद्ध करें। मेवाड़के राणा राजसिंह, बीकानेरके राजा, आप, और मैं, ये चारों जने मिलकर मुगलोंके राज्यको एक फूँकसे उड़ा दे सकते हैं,—आइए।

जय०—उसके बाद सम्राट कौन होगा ?

जस०—क्यों, राणा राजसिंह।

जय०—मैं औरंगज़ेबकी अधीनता स्वीकार करता हूँ, मगर राजसिंहका प्रभुत्व नहीं मान सकता।

जस०—क्यों राजा साहब ?—वे अपनी जातिके हैं, इसलिए ?

जय०—अवश्य। अपनी जातिके दुर्वचन नहीं सहूँगा। मैं किसी ऊंची प्रवृत्तिका ढोंग नहीं रचता। संसार मेरे निकट एक बाजार है। जहाँ कम दामोंमें अधिक माल पाऊंगा, वहीं जाऊंगा। औरंगज़ेब कम दामोंमें अधिक दे रहा है। इस निश्चितको छोड़कर मैं अनिश्चितके लिए प्रयत्न करना नहीं चाहता।

जस०—हूँ।—अच्छा राजा साहब, आप जाकर विश्राम करें। मैं सोच समझकर उत्तर दूँगा।

जय०—अच्छी बात है। सोचकर देखिएगा,—यह केवल संसारमें बेचने खरीदने का मामला है। और हम स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं ! राजभक्ति भी धर्म है। (प्रस्थान)

जस०—हिन्दू-साम्राज्य,—कविका स्वप्न है। हिन्दुओंका हृदय बहुत ही सूखा, बिल्कुल ठंडा पड़ गया है। अब उसमे परस्पर जोड़ नहीं लग सकता। स्वाधीन राजा न हो सकें, राजभक्त प्रजा तो हो सकते हैं।' ठीक कहा जयसिंह, किसके लिए युद्ध करने जाऊँ ? दारा मेरा कौन है ?—नर्मदा

युद्धका बदला खेजुवाके युद्धमें ले ही लिया है ।

[महामायाका प्रवेश]

महामाया—महाराज, इसको बदला कहते हैं ? मैं अब तक आड़में खड़ी हुई तुम्हारे इस पौरुषहीन, समभार काँटेके पलड़ोंके ऐसे, आन्दोलनको देख रही थी। वाह ! खूब ! अच्छा समझ लिया कि बदला चुका लिया। इसे बदला कहते हैं महाराज ? औरंगज़ेबके पक्षमें होकर उसके डेरे लूटकर भागनेका नाम बदला है ? इसकी अपेक्षा तो वह हार अच्छी थी। यह हारके ऊपर पापका बोझ है। राजपूत जाति विश्वासघात कर सकती है, यह तुमने ही दिखलाया।

जस०—महामाया, लूट करनेके पहले मैंने औरंगज़ेबका पक्ष छोड़ दिया था।

महामाया—और उसके पीछे उसके डेरे लूट लिये ?

जस०—युद्ध करते करते लूट की है, डकैती नहीं की।

महा०—इसे युद्ध कहते हैं ?—धिक्कार है !

जस०—महामाया, तुम्हारे निकट इसके सिवा क्या और कोई बात ही नहीं है ? दिन रात तुम्हारी तीखी झिड़कियाँ सुननेके लिए हीं मैंने तुमसे ब्याह किया था ?

महा०—और नहीं तो क्यों ब्याह किया था ?

जस०—क्यों ! विचित्र प्रश्न है !—लोग ब्याह किस लिए करते हैं ?

महा०—हाँ, किस लिए ? संभोगके लिए ? विलास-वासनाको चरितार्थ करनेके लिए ? यही बात है ?—यही बात है ?

जस०—(कुछ इधर उधर करके) हाँ,—एक तरहसे यही कहना पड़ेगा।

महा०—तो फिर एक वेश्या क्यों नहीं रख ली ?

जस०—जान पड़ता है, आँधी आ गई !

महा०—महाराज, जो तुम केवल अपनी पशु-प्रवृत्तिको चरितार्थ करना चाहते हो, तो उसका स्थान कुल-कामिनीका पवित्र अन्तःपुर नहीं है, उसका स्थान वेश्याका सुसज्जित नरक है। वहीं जाओ। तुम रुपया दोगे, वह रूप

देगी। तुम उसके पास लालसाके मारे जाओगे, और वह तुम्हारे पास आवेगी पापी पेटकी ज्वालाकी मारी। स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध वैसा नहीं है!

जस०—फिर ?

महा०—स्वामी और स्त्रीका सम्बन्ध प्रेमका सम्बन्ध है। जो प्रेम प्रियतमको दिन दिन नज़रोंसे नहीं गिराता, दिन दिन और भी प्यारा बनाता जाता है, जो प्रेम अपनी चिन्ताको भूल जाता है, और अपने देवताके चरणोंमें अपनी बलि देता है, जो प्रेम प्रातःकालके सूर्यकी किरणोंकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको चमका देता है, उज्ज्वल बना देता है, गंगाके जलकी तरह जिसके ऊपर पड़ता है उसीको पवित्र कर देता है, देवताके वरदानकी तरह जिसके ऊपर बरसता है उसीको भाग्यशाली बना देता है, यह वही प्रेम है। यह स्थिर, शान्त, और आनन्दमय है, क्यों कि यह स्वार्थ-त्यागहीका रूपान्तर है।

जस०—महामाया, तुम मुझसे क्या वैसा ही प्रेम करती हो ?

महा०—हाँ। तुम्हारे गौरवको गोदमें लेकर मैं मर सकती हूँ। उस गौरवके लिए मुझे इतनी चिन्ता इतना आग्रह है कि उस गौरवको मलिन होते देखनेके पहले मैं चाहती हूँ कि अन्धी हो जाऊँ। राजपूत जातिके गौरव, मारवाड़के गौरवका तुम्हारे हाथोंसे गला घोंटा जाय, इसके पहले ही मैं मरना चाहती हूँ। मैं तुमसे इतना प्रेम करती हूँ।

जस०—महामाया!

महा०—आँख उठाकर देखो,—यह धूप पड़नेसे चमकती हुई पर्वत-माला, दूरपर ये बालूके ढेर। आँख उठाकर देखो, यह पहाड़ी नदी लहरा रही है, जैसे सौन्दर्य झिलमिला रहा है। आँख उठाकर देखो, देखो,—यह नीले रंगका आकाश, जैसे वह अपनी नीलिमा निचोड़कर दिखा रहा है। यह उल्लुओंका शब्द सुनो। साथ ही साथ सोचो, इस जगहपर एक दिन देवोंका निवास था। मारवाड़ और मेवाड़, दोनों वीरताके युग्म बालक हैं। महत्त्वके आकाशमें बृहस्पति और शुक्र ग्रहके समान चमक रहे हैं। धीरे धीरे उस महिमाका महासमारोह मेरे सामनेसे चला जा रहा है। आओ चारणोंके बालको, गाओ वही गान।

जस०—महामाया !

महा०—बोलो नहीं। यह इच्छा जब मेरे मनमें आती है, तब मुझे जान पड़ता है कि यह मेरा पूजाका समय है। घंटा-शंख बजाओ, बोलो नहीं।

जस०—अवश्य ही इसे कोई मानसिक रोग हो गया है।

(धीरे धीरे प्रस्थान)

महा०—कौन हो तुम सुन्दर, सौम्य, शान्त,—जो मेरे आगे आकर खड़े हो गये ! (चारणोंके बालकोंका प्रवेश) गाओ बालको, वही जन्म-भूमिका गाना गाओ।

गजल सोहनी—ताल धमार

देश ऐसा खोजनेसे भी न पाओगे कहीं।
श्रेष्ठ सबसे जन्मभूमि, इसे भुलाओगे नहीं॥
अन्न-धन फूलों-फलोंसे है भरी धरती हरी।
देशभक्तो, श्रेय भी उत्कर्ष पाओगे यहीं।
स्वप्नसे तयार त्यों स्मृतिसे घिरा यह देश है।
है यही सर्वस्व, इसको तुम गँवाओगे नहीं।
चन्द्र-सूर्य-प्रकाश, ऋतुओंका प्रभाव प्रसन्नता।
हैं कहाँ ? ये खूबियाँ, ऐसी न पाओगे कहीं॥
खेलती ऐसे बिजलियाँ श्याम मेघोंमें कहाँ ?
पक्षियोंके शब्द ऐसे तुम सुना दोगे कहीं॥
हैं पवित्र नदी कहाँ इतनी, पहाड़ विचित्र ही ?
इतने खेत हरेभरे हमको दिखा दोगे कहीं ?
फूल पेड़ोंमें विचित्र प्रकारके फूला करें।
बोलते पक्षी विविध हर कुञ्जमें रहते यहीं॥
भाइयोंका नेह ऐसा ही मिलेगा किस जगह ?
प्यार माका बापका ऐसा न पाओगे कहीं॥
जननि, तेरे श्री-चरण रखकर हृदयमें अन्तको
मर सकें हम जन्मही की भूमिके ऊपर यहीं॥

———

चौथा अंक

पहला दृश्य

स्थान—टाँड़में शुजाका महल

समय—सन्ध्या

(पियारा गा रही है)

कव्वाली

किसने सुनाया सजनी, यह श्याम नाम मुझको ।
भूला है उस घड़ीसे दुनियाका काम मुझको ॥
कानोंकी राह जाकर, मनमें रहा समाकर ।
बेचैन भी बनाकर भाता मुदाम मुझको ॥ किसने० ॥
इस नाममें सखी, बस इतना मधुर भरा रस ।
छुटता न मुँहसे, भाया तकियाकलाम मुझको ॥ किसने० ॥
मैं रट रही हूँ उसको, उसमें समा रही हूँ ।
कैसे मिलेगा, बोलो, आराम श्याम मुझको ॥ किसने० ॥

[शुजाका प्रवेश]

शुजा—सुनती हो पियारा, इस आखिरी लड़ाईमें भी दाराने औरंगज़ेबसे शिकस्त खाई ।

पियारा—शिकस्त खाई न !

शुजा—औरंगज़ेबके ससुर शाहजादे दाराकी तरफ़से लड़े, और लड़ाईमें मारे गये,—कहो कैसी बात सुनाई ?

पियारा—इसमें खास बात क्या हुई ?

शुजा—खास बात नहीं हुई ? बूढ़ा सिपाही अपने दामादके खिलाफ लड़कर मारा गया—सिर्फ फर्जके लिए ।—सुभान अल्लाह !

पियारा—इसके लिए मैं 'क्या बात है!' तक कहनेको तो तैयार हूं, पर इसके आगे नहीं बढ़ सकती।

शुजा—जसवन्तसिंह अगर इस मर्तबा अपनी फौज लेकर दाराकी मदद करता,—लेकिन नहीं मदद की। दाराको मदद देना मंजूर करके पीछे कौलसे फिर गया।

पियारा—ताज्जुबकी बात है!

शुजा—इसमें ताज्जुब क्या है पियारा? इसमें ताज्जुबकी कोई बात नहीं है।

पियारा—नहीं है, क्यो? मैं समझी, शायद है, इसीसे ताज्जुब कर रही थी।

शुजा—राजा जसवन्तने खेजुआकी लड़ाईमें जिस तरहकी दगाबाजी की थी, इस मर्तबा दाराको भी ठीक उसी तरहका धोखा दिया है। इसमें ताज्जुब ही क्या है!

पियारा—और क्या,—मैं ताज्जुब कर रही हूं—

शुजा—फिर ताज्जुब!

पियारा—ना ना। यह नहीं। पहले पूरा हाल तो सुन लो।

शुजा—क्या?

पियारा—मैं यह सोचकर ताज्जुब कर रही हूं कि पहले क्या सोचकर ताज्जुब कर रही थी!

शुजा—ताज्जुब अगर करो, तो ताज्जुब होनेकी एक बात हुई है।

पियारा—वह क्या?

शुजा—वह यह कि औरंगजेबका बेटा मुहम्मद मेरी लड़कीके लिए अपने बापको छोड़कर मुझसे आ मिला है। क्या सोचकर वह ऐसा कर रहा है?

पियारा—इसमें ताज्जुब क्या है! मुहब्बतमें पड़कर लोग इससे भी बढ़कर सख्तीके काम कर डालते हैं। चाहके लिए लोग दीवारें फांद गये हैं, छतोंसे कूद पड़े हैं, दरिया तैर गये हैं, आगमें फाँद पड़े हैं, जहर खाकर मर गये हैं। यह तो एक महज मामूली बात है। बापको छोड़ दिया तो क्या बड़ा भारी काम किया? यह तो सभी करते हैं, मैं इसके लिए ताज्जुब करनेको तैयार नहीं।

शुजा—लेकिन—नहीं,—यह एक बड़ा भारी ताज्जुब है। जो चाहो सो हो, लेकिन मुहम्मदने और मैंने मिलकर औरंगज़ेबकी फौजको बंगालसे मार भगाया है।

पियारा—इस लड़ाईके सिवा तुम्हारे पास क्या और कोई जिक्र ही नहीं है? मैं जितना तुम्हें भुला रखना चाहती हूँ, उतना ही तुम उसी बातको छेड़ते हो।

शुजा—एक तो जंगमें यों ही बड़ा भारी मजा है और इसके सिवा—

[बाँदीका प्रवेश]

बाँदी—जहाँपनाह, एक फकीर हाजिर होना चाहता है।

पियारा—कैसा फकीर है,—लंबी दाढ़ी है?

बाँदी—हाँ सरकार, वह कहता है, बड़ी जरूरत है, अभी मिलना चाहता हूँ।

शुजा—अच्छा, यहीं ले आ। पियारा, तुम भीतर जाओ।

पियारा—अच्छी बात है, तुम मुझे भगाये देते हो।—लो, मैं जाती हूँ।

(प्रस्थान)

शुजा—जा, उसे यहाँ भेज दे। (बाँदीका प्रस्थान)

शुजा—पियारा एक हँसीका फौवारा—एक बे-मतलबकी बातोंका दरिया है। इसी तरह वह मुझे जंगकी फिक्रोंसे बहला रखती है—

[दिलदारका प्रवेश]

दिलदार—शाहजादा साहब, तसलीम। आपके नामका एक खत है।

(पत्र देना)

शुजा—(पत्र लेकर खोलकर पढ़कर) यह क्या! तुम कहाँसे आये हो?

दिल०—क्या खतमें दस्तखत नहीं हैं शाहजादा साहब?—चेहरा देखनेसे ही शाहजादेकी अक्लमन्दीका पता चलता है। खूब चाल चली।

शुजा—क्या चाल?

दिल०—शाहजादेने शुजाकी लड़कीसे शादी करके,—ओः,—खूब तदवीर की है। सामनेसे तीर मारनेके बनिस्बत पीछेसे,—ओः औरंगजेबका बेटा हीं तो ठहरा।

शुजा—पीछेसे तीर मारेगा कौन ?

दिल०—डर क्या है,—मैं क्या यह बात सुल्तान शुजासे कहने जाता हूँ ! यह खत उन्हें कभी भूलकर दिखा न दीजिएगा शाहजादा साहब—

शुजा—अरे वाह, मैं ही तो सुल्तान शुजा हूँ। मुहम्मद तो मेरा दामाद है !

दिल०—हाँ ! ! चेहरा तो आपका अच्छे नवजवानके जैसा है। सुनिए,—ज्यादह चालाकी न करिएगा। आप अगर मुहम्मद हैं तो मैं जो कह रहा हूँ सो ठीक समझ ही रहे होंगे। और,—अगर सुल्तान शुजा हैं, तो जो मैं कह रहा हूँ उसका एक हर्फ भी सच नहीं है।

शुजा—अच्छा, तुम इस वक्त जाओ। इसकी तदबीर मैं अभी करता हूँ,—तुम जाकर आराम करो, जाओ।

दिल०—जो हुक्म। (प्रस्थान)

शुजा—यह तो बड़ी उलझनका मामला दरपेश है। बाहरी दुश्मनोंके मारे ही नाकमें दम है। उसके ऊपर औरंगजेब, तुमने घरमें भी दुश्मन लगा दिये ! लेकिन जाओगे कहाँ ! अभी हाथों-हाथ तदबीर करता हूँ। तकदीरसे यह खत मेरे हाथ पड़ गया।—लो, यह मुहम्मद आ रहा है।

[मुहम्मदका प्रवेश]

शुजा—मुहम्मद !—पढ़ो यह खत।

मुह०—(पढ़कर) यह क्या ! यह क्या ! यह किसका खत है ?

शुजा—तुम्हारे वालिदका ! दस्तखत नहीं देखते ? तुमने खुदाको गवाह करके उसे खत लिखा था कि तुमने अपने बापकी जो मुखालफत की है उसके एवजमें अपने ससुर,—यानी मुझको धोखा देकर औरंगजेबको खुश करोगे।

मुह०—मैंने अब्बाको कोई खत नहीं लिखा है। यह जाली खत है।

शुजा—मुझे यकीन नहीं आता। मैं एतबार नहीं कर सकता। तुम आज इसी घड़ी मेरे घरसे चले जाओ।

मुह०—यह क्या ? कहाँ जाऊँ ?

शुजा—अपने बापके पास।

मुह०—लेकिन मैं कसम खाता हूँ—

शुजा—नहीं, बहुत हो चुका।—मैं सामनेकी लड़ाईमें हारूँ या जीतूँ यह अलग बात है। अपने घरमें दुश्मनको,—आस्तीनमें साँपको—नहीं पाल सकता।

मुह०—मैं—

शुजा—मैं कुछ सुनना नहीं चाहता। जाओ, अभी जाओ।

(मुहम्मदका प्रस्थान)

शुजा—हाथों हाथ तदबीर कर दी। औरंगजेबने बड़ी भारी चाल खेली थी,—मगर जायगा कहाँ! वह लो, पियारा फिर आ गई।

[पियाराका प्रवेश]

शुजा—पियारा, पकड़ लिया।

पियारा—किसे?

शुजा—मुहम्मदको। साहबजादेने मुझपर फन्दा डाला था। तुमसे मैं अभी कह रहा था न कि यह बड़े ताज्जुबकी बात है। इस वक्त सब हाल खुल गया। पानीकी तरह साफ हो गया।—उसे घरसे निकाल दिया।

पियारा—किसे?

शुजा—मुहम्मदको।

पियारा—यह क्यों?

शुजा—बाहर दुश्मन,—घरमें दुश्मन,—शाबास भैया,—खूब अक्लमन्दीकी थी!—मगर चाल चल न सकी। मैंने पकड़ लिया।—यह देखो खत।

पियारा—(पत्र पढ़कर) तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है। हकीमको दिखाओ।

शुजा—क्यों?

पियारा—यह जाली,—झूठा खत है। समझ नहीं सके? औरंगजेबका फरेब। इतना भी नहीं समझ सकते?

शुजा—नहीं यह अच्छी तरह समझमें नहीं आता।

पियारा—यही अक्ल लेकर तुम चले हो औरंगजेबसे भिड़ने! दहीके धोखे कपास खा गये! मुझसे एक दफा पूछा भी नहीं! दामादको निकाल

दिया ! चलो, अब चलकर लड़की और दामादको समझायें।

शुजा—यह खत जाली है !—ऐसी बात !—कहाँ, यह तो तुमने नहीं कहा था।—खैर, होशियार रहना अच्छी ही बात है।

पियारा—इसीसे दामादको निकाल दिया ?

शुजा—बेशक, बड़ी भारी भूल हो गई, यही कहना चाहिए।—खैर, सुनो, एक तदबीर करता हूँ। लड़कीको उसके साथ किये देता हूँ और मुनासिब तौरसे जहेज भी दिये देता हूँ। देकर लड़कीको उसकी ससुराल भेजता हूँ। इसमें कुछ ऐब नहीं है। डर क्या है—चलो, चलकर दामादको यही समझावें। यही कहकर उसे बिदा कर दें।

पियारा—लेकिन बिदा क्यों कर दोगे ?

शुजा—वक्त खराब है। होशियार रहना अच्छा है। समझती नहीं हो।—चलो, चलकर समझावें। (दोनों जाते हैं)

दूसरा दृश्य

स्थान—जिहनखाँके घरमें दाराके रहनेका कमरा

समय—रात

[सिपर और जोहरत खड़े हैं।]

जोहरत—सिपर !

सिपर—क्या ?

जोहरत—देखते हो ?

सिपर—क्या ?

जोहरत—कि हम लोग यों जंगली जानवरोंकी तरह एक जंगलसे दूसरे जंगलमें मारे मारे फिरते हैं; रास्तेके कंगालोंकी तरह एक आदमीके दरवाजेपर लात खाकर दूसरेके दरवाजे पेट-भर खानेके लिए जाते हैं।—देखते हो ?

सिपर—देखता हूँ। लेकिन चारा क्या है ?

जोहरत—चारा क्या है ? मर्द हो तुम।—बेधड़क कह रहे हो कि चारा क्या है ? मैं अगर मर्द होती, तो इसकी तदबीर करती।

सिपर—क्या तदबीर करतीं ?

जोहरत—(छुरा निकालकर) यही छुरा लेकर लुटेरे दगाबाज़ औरंगजेबकी छातीमें घुसेड़ देती ।

सिपर—खून !!!

जोहरत—हाँ खून; चौंक पड़े ?—खून । लो यह छुरा, दिल्ली जाओ । तुम बच्चे हो, तुमपर किसीको शक न होगा—जाओ ।

सिपर—कभी नहीं । खून नहीं करूँगा ।

जोहरत—डरपोक ! देखते हो—माँ मर रही है ! देखते हो—अब्बाजान पागल हो गये हैं ! बैठे बैठे यह सब देखते रहोगे ?

सिपर—क्या करूँ !

जोहरत—डरपोक ! बुज़दिल !

सिपर—मैं बुज़दिल नहीं हूँ जोहरत, मैं मैदाने जंगमें अब्बाके पास हाथीपर बैठकर लड़ा हूँ । मुझे जान जानेका डर नहीं है । लेकिन खून नहीं करूँगा ।

जोहरत—अच्छी बात है । (प्रस्थान)

सिपर—बहन, यह गुस्सा बेकार है । कोई चारा नहीं है । (प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—नादिराका कमरा

समय—रात

[पलंगपर नादिरा पड़ी है ! पास दारा है,
दूसरी तरफ सिपर और जोहरत हैं ।]

दारा—नादिरा, दुनियाने मुझे छोड़ दिया—खुदाने मुझे छोड़ दिया । सिर्फ तुमने मेरा साथ नहीं छोड़ा । लेकिन अब तुम भी मुझे छोड़ चलीं !

नादिरा—मेरे लिए तुमने बहुत मुसीबतें झेली हैं प्यारे !—और—

दारा—नादिरा, दुखकी जलनसे पागल होकर मैंने तुमको बहुत सख़्त

बातें कही हैं।—

नादिरा—प्यारे, मुसीबतमें तुम्हारा साथ देना ही मेरे लिए बड़ी फख्रकी बात है। उसीकी याद साथ लेकर मैं दूसरी दुनियाको जाती हूँ—सिपर—बेटा! बेटी जोहरत! मैं जाती हूँ—

सिपर—तुम कहाँ जाती हो अम्मी?

नादिरा—कहाँ जाती हूँ, यह मैं नहीं जानती। मगर जिस जगह जाती हूँ वहाँ शायद कोई रंज या मुसीबत नहीं है—भूख-प्यासकी तकलीफ नहीं है—दुख-दर्द-बीमारी नहीं है—लड़ाई-झगड़ा और डाह नहीं है।

सिपर—तो हम भी वहीं चलेंगे अम्मी,—चलो अब्बा, अब नहीं सहा जाता।

नादिरा—अब तुम्हें कोई तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी बेटा! तुम जिहनखाँके घरमें आ गये हो। अब कुछ दुख न मिलेगा।

सिपर—यह जिहनखाँ कौन है अब्बा?

दारा—मेरा एक पुराना दोस्त।

नादिरा—तुम्हारे अब्बाने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है। वह तुम्हारी तकलीफें रफा करेगा और मदद देगा।

सिपर—लेकिन मैं उसे कभी प्यार न कर सकूँगा।

दारा—क्यों सिपर?

सिपर—उसका चेहरा—उसकी नजर, नेकीका नमूना नहीं है। अभी वह एक नौकरसे न जाने क्या फुसफुस कह रहा था—और मेरी तरफ ऐसी चोरकी-सी नजरसे देख रहा था कि मुझे बड़ा खौफ मालूम हुआ—मुझे बड़ा खौफ मालूम हुआ अम्मी! मैं दौड़कर तुम्हारे पास चला आया।

दारा—सिपर सच कहता है नादिरा! मैंने जिहनके चेहरेपर एक तरह की ऐयारीकी झलक देखी है, उसकी आँखोंमें एक खूनी चमक देखी है, उसकी धीमी आवाजसे कभी कभी जान पड़ता है कि वह एक छुरेपर धार रख रहा है। उस दिन जब वह मेरे पैरोंपर गिरकर अपनी जान बचानेके लिए गिड़गिड़ा रहा था, तब वह चेहरा और ही था; और आजका चेहरा और ही है। यह नजर, यह आवाज, यह ढंग—बिलकुल नया है।

नादिरा—तब भी तुमने दो मर्तबा उसकी जान बचाई है। वह इन्सान ही तो है, साँप तो नहीं है?

दारा—इन्सानका एतबार मुझे नहीं रहा नादिरा, मैंने देखा है कि इंसान साँपसे भी बढ़कर जहरीला और पाजी है। मगर कभी कभी—क्यों नादिरा, बहुत तकलीफ हो रही है?

नादिरा—नहीं, कुछ नहीं। मै तुम्हारे पास हूँ। तुम्हारी मुहब्बत-आमेज नजरसे मेरी सब तकलीफ मिटी जाती है। लेकिन अब देर नहीं है—तुम्हारे हाथमें सिपरको सौंपे जाती हूँ—देखना!—बच्चे सुलेमानसे मुलाकात न हो सकी!—खुदा!—(मृत्यु)

दारा—नादिरा! नादिरा!—नहीं, सब ठण्डा हो गया—चली गई!

सिपर—अम्मी! अम्मी!

दारा—चिराग गुल हो गया।

(जोहरत दोनों हाथोंसे कलेजा थामकर एकटक ऊपरकी तरफ देखती है।)

[चार सिपाहियोंके साथ जिहनखाँका प्रवेश]

दारा—कौन हो तुम? इस वक्त इस जगहको नापाक करने आये हो?

जिहन०—गिरफ्तार कर लो।

दारा—क्या? मुझे गिरफ्तार करोगे जिहनखाँ?

सिपर—(दीवारसे तलवार उतारकर) किसकी मजाल है?

दारा—सिपर, तलवार रख दो!—यह बहुत ही पाक घड़ी है। यह बहुत ही पाक जगह है। अभी तक नादिराकी रूह यहाँ मौजूद है—दुनियाके सुख-दुखसे बिदा होनेके पहले वह सबको नजर भर देख लेना चाहती है। अभी तक बहिश्तसे हूरें उसे वहाँ ले जानेके लिए आकर नहीं पहुँचीं। उसे सदमा न पहुँचाओ—उसे परेशान न करो—मुझे गिरफ़्तार करना चाहते हो जिहनखाँ?

जिहन०—हाँ शाहजादे साहब!

दारा—जान पड़ता है, औरंगजेबके हुक्मसे!

जिहन०—हाँ शाहजादे साहब!

दारा—नादिरा, तुम सुन तो नहीं रही हो? सुन पाओगी तो नफ़रतसे तुम्हारी लाश काँप उठेगी! तुम्हें खुदापर बड़ा भरोसा था!

जिहन०—इन्हें गिरफ्तार कर लो। अगर ये रुकावट डालें, तो तलवार-से काम लेनेमें भी मत चूको।

दारा—मैं रुकावट नहीं डालता। मुझे बाँधो। मुझे कुछ भी ताज्जुब नहीं है। मैं इसी तरहके किसी सुलूककी उम्मेद कर रहा था। और कोई होता तो शायद और तरहके सुलूकका उम्मेदवार होता। और होता तो शायद सोचता कि यह कितनी बड़ी नमकहरामी है, जिसे मैंने दो दफा बचाया है वही मुझे पहले अपने पास रखकर पीछे धोखा दे,—यह कितना बड़ा पाजीपन है! लेकिन मैं यह नहीं सोचता। मैं जानता हूँ कि दुनियाके सब अच्छे खयालात गुनाहके खौफसे जमीनमें सिर डाले फूट फूटकर रो रहे हैं, ऊपरकी तरफ आँख उठाकर देखनेकी भी वे हिम्मत नहीं कर सकते। मैं जानता हूँ, इस वक्त दुनियाका धरम है खुदगर्जी, ढंग है फरेब, पूजा है खुशामद, फर्ज है जुआचोरी। ऊँचे खयालात अब बहुत पुराने हो गये हैं। शाइस्तगीकी (सभ्यताकी) रोशनीमें धरमका अंधेरा दूर हो गया है। वह पुराना धरम जो कुछ बाकी है, वह शायद किसानोंकी झोपड़ियोंमें, कोल भील वगैरह पहाड़ी कौमोंके गँवारपनमें है।—हाँ जिहनखा, मुझे गिरफ्तार करो।

सिपर—तो मुझे भी गिरफ्तार करो।

जिहन०—तुमको भी न छोड़ूगा शाहजादे साहब, बादशाह सलामतसे खूब इनाम पाऊँगा।

दारा—पाओगे क्यों नहीं! इतनी बड़ी निमकहरामीकी कीमत न पाओगे, यह भी कहीं हो सकता है!—खूब दौलत पाओगे। मैं तुम्हारे उस खुश चेहरेको अभीसे देख रहा हूँ। यह कैसी खुशीकी बात है! जब मरना, अपने साथ लेते जाना।

जिहन०—देर क्यों कर रहे हो, गिरफ्तार करो।

दारा—गिरफ़्तार करो।—नहीं, यहाँ नहीं, बाहर चलो। इस बहिश्तको दोजख मत बनाओ। इतने बड़े कुदरती कानूनके खिलाफ काम यहाँ!—ऐ जमीन।—तू इतना सह सकती है! चुपचाप सह रही है!—खुदा! तुम दोनों हाथोंको समेटे यह सब देख रहे हो! चलो जिहनखाँ, बाहर चलो। (सब जाना चाहते हैं)

दारा—ठहरो, एक बात कह जाऊँ, जिहनखाँ, मानोगे? जिहनखाँ, इस देवीकी लाशको लाहौर भेज देना और वहीं शाही खान्दानके कब्रिस्तानमें इसे गड़वा देना। ऐसा कर सकोगे? मैंने दो मर्तबा तुम्हारी जान बचाई है,

इसीसे यह भीख तुमसे माग रहा हूं। नहीं तो इतनेके लिए भी तुमसे नहीं कह सकता।—मेरा कहा करोगे?

जिहन०—जो हुक्म शाहजादे साहब! यह काम न करूंगा तो मालिक औरंगजेब नाराज होंगे।

दारा—तुम्हारे मालिक औरंगजेब'—हूं—मुझे कुछ भी रंज नहीं है!—चलो—(फिरकर) नादिरा!—

(इतना कहकर दारा फिरकर सहसा नादिराकी लाशके पास घुटने टेकते और दोनों हाथोंसे मुँह ढक लेते हैं।)

दारा—(उठकर) चलो जिहनखाँ।

(सब बाहर जाते हैं। सिपर नादिराकी लाशपर गिरकर रोता है।)

दारा—(रूखे स्वरसे) सिपर!

(भयसे सिपर चुप हो जाता है। तब बाहर जाता है।)

चौथा दृश्य

स्थान—जोधपुरका महल

समय—सन्ध्या

[जसवन्तसिंह और महामाया]

महा०—महाराज, अभागे दारासे कृतघ्नता करनेके पुरस्कारमें गुजरातका सूबा पाकर सन्तुष्ट हैं न?

जस०—महामाया, उसमें मेरा क्या अपराध है?

महा०—ना। अपराध क्या है?—यह तुम्हारा बड़ा भारी सम्मान है: बड़ा भारी गौरव है!

जस०—गौरव न सही, लेकिन इसमें अन्याय भी मुझे कुछ नहीं देख पड़ता। दाराकी सहायता करना या न करना मेरी इच्छाकी बात है। दारा मेरे कौन हैं?

महा०—और कोई नहीं, केवल प्रभु!

जस०—प्रभु!—किसी समय थे: आज कोई नहीं हैं।

महा०—सच तो है! दारा आज भाग्य-चक्रके फेरमें नीचे पड़े हैं, भाग्यकी लाञ्छना और धिक्कार सह रहे हैं; आज उनके साथ तुम्हारा क्या सम्बन्ध है! दारा उस समय तुम्हारे स्वामी थे जब वे पुरस्कार दे सकते थे!

जस०—सुमे!

महा०—हाय महाराज! 'थे', इसका क्या कुछ मूल्य ही नहीं है? बीते समयको क्या एकदम मिटा सकते हो? वर्त्तमानसे क्या उसे एकदम अलग कर सकते हो? एक दिन जो तुम्हारे दयालु प्रभु थे, उनका आज तुम्हारे निकट क्या कुछ भी मूल्य नहीं है!—धिक्कार है!

जस०—महामाया, तुम्हारा मेरे साथ तर्क करनेका,—जबान लड़ानेका सम्बन्ध नहीं है। मैं जो उचित समझता हूं, वही कर रहा हूं। मैं तुमसे उपदेश नहीं चाहता।

महा०—उपदेश क्यों चाहोगे? युद्धमें हारकर लौट आकर, विश्वास-घातक होकर लौट आकर, तुम चाहते हो मेरी भक्ति! क्यों?—

जस०—यह मैं क्या तुमसे कुछ उचितसे बहुत अधिक चाहता हूं, महामाया?

महा०—नहीं, तुम्हारा यह दावा सम्पूर्ण रूपसे स्वाभाविक है! क्षत्रिय वीर हो तुम,—तुमने सारी क्षत्रिय जातिका अपमान किया है!—तुम नहीं जानते, सारा राजपूताना आज तुमको धिक्कार रहा है! लोग कहते हैं कि औरंगज़ेबका ससुर शाहनवाज दाराकी ओर होकर अपने दामादसे लड़ा,—उसने प्रसन्नतापूर्वक मृत्युको गलेसे लगाया और तुम दाराको आशा देकर पीछेसे कायरोंकी तरह अलग हटकर खड़े हो गये! हाय स्वामी, क्या कहूँ, तुम्हारे इस अपमानसे मेरी नस नसमें तो जैसी आगकी लहरें दौड़ रही हैं, पर वह अपमान तुम्हें स्पर्श भी नहीं करता! बेशक आश्चर्यकी बात है!

जस०—महामाया—

महा०—बस!—जाओ, अपने नये प्रभु औरंगज़ेबके पास जाओ।

(क्रोधसे प्रस्थान)

जस०—अच्छा!—यही होगा। इतना अपमान!—अच्छा, यही होगा।

(प्रस्थान)

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—किलेका शाही महल

समय—रात्रि

[शाहजहाँ और जहानारा]

शाह०—अब और क्या बुरी खबर है बेटी, अब और क्या बाकी है?—मेरा दारा शिकस्त खाकर इधर उधर भागा भागा फिर रहा है। शुजाने जंगली आराकानके राजाके यहाँ जाकर पनाह ली है। मुराद ग्वालियरके किलेमें कैद है और क्या बुरी खबर दे सकती हो बेटी?

जहा०—अब्बा, यह मेरी बदनसीबी है कि मैं ही रोजाना बुरी खबरें लेकर आपके पास आती हूँ। लेकिन क्या करूँ अब्बा, बदनसीबी अकेली नहीं आती।

शाह०—कहो और क्या खबर है?

जहा०—अब्बा, भैया दारा गिरफ़्तार हो गया?

शाह०—गिरफ़्तार हो गया?—कैसे गिरफ़्तार हो गया?

जहा०—जिहनखाँने धोखा देकर गिरफ़्तार करा दिया।

शाह०—जिहनखाँ!—जिहनखाँ! क्या कहती है जहानारा, जिहनखाँने?

जहा०—हाँ अब्बा!

शाह०—कयामतका दिन क्या बहुत जल्द आनेवाला है?

जहा०—सुना है, परसों दारा और उसके बेटे सिपरको एक बूढ़े हाथीकी नंगी पीठपर बैठाकर दिल्ली-भरमें घुमाया गया है। वे मैले सादे कपड़े पहने थे। उनकी हालत देखकर कोई ऐसा न था, जो रो न दिया हो।

शाह०—तो भी, इनमेंसे कोई दाराको छुड़ानेके लिए नहीं दौड़ा? सिर्फ काठके पुतलोंकी तरह खड़े खड़े सब लोग देखते ही रहे? वे सब क्या पत्थरके बने हुए थे?

जहा०—नहीं, पत्थर भी गरम हो उठता है। वे कीच हैं। औरंगज़ेबकी गोलियों और बन्दूकोंका खौफ सबपर गालिब है। मानो किसी जादूगरने उन-

पर जादू डाल रक्खा है। कोई भी सिर उठानेकी हिम्मत नहीं करता। रोते हैं सो भी छिपकर,—कहीं औरंगज़ेब देख न ले!

शाह०—उसके बाद?

जहा०—उसके बाद औरंगज़ेबने खिजराबादमें, एक गंदे और तंग मकानमें दाराको कैद कर रक्खा है।

शाह०—और सिपर और जोहरत?

जहा०—सिपरने अपने बापका साथ नहीं छोड़ा। जोहरत इस वक्त औरंगजेबके महलमें है।

शाह०—तू जानती है, औरंगजेबने दाराको क्यों कैद कर रक्खा है? वह उससे क्या सुलूक करेगा?

जहा०—क्या करेगा, यह तो नहीं जानती। लेकिन,—लेकिन—

शाह०—क्यों जहानारा, काँप क्यों उठी!

जहा०—अगर वही करे तो अब्बा?

शाह०—क्या! क्या जहानारा!—मुँह क्यों ढक लिया! वह,—वह भी क्या मुमकिन है!—भाई भाईको कत्ल करेगा!

जहा०—चुप।—वह किसके पैरोंकी आहट है! सुन लिया उसने।—अब्बा आपने यह क्या किया! क्या किया!

शाह०—क्या किया?

जहा०—वह बात कह डाली!—अब बचनेकी कोई सूरत नहीं रही।

शाह०—क्यों?

जहा०—शायद औरंगजेब दाराका खून न करता। शायद इतने बड़े गुनाहकी और बेरहमीकी बात उसे सूझती ही नहीं। लेकिन वह बात आपने उसे सुझा दी!—क्या किया! क्या किया! सब सत्यानाश कर दिया!

शाह०—औरंगजेब तो यहाँ नहीं है, किसने सुन लिया?

जहा०—वह नहीं है, लेकिन यह दीया तो है, हवा तो है, चिराग तो है! आज सब उसीके शरीक हैं। आप समझते हैं यह आपका महल है। नहीं, यह औरंगजेबका पत्थरका जिगर है! यह हवा नहीं, औरंगजेबकी जहरीली साँस है। यह चिराग नहीं, उस जल्लादकी नजर है। अब्बाजान, क्या आप यह सोचते हैं कि इस महलमें, इस किलेमें, इस सल्तनतमें, आप-

का या मेरा एक भी दोस्त है ? नहीं, एक भी नहीं। सब उसीके शरीक हो गये हैं। सब खुशामदी और मतलबके यार हैं। चुगलखोर हैं!—यह किसकी परछाँही है?

शाह०—कहाँ?

जहा०—नहीं, कोई नहीं है।—आप उधर क्या देख रहे हैं अब्बाजान?

शाह०—कूद पड़ूँ?

जहा०—यह क्यों अब्बा!

शाह०—देखूँ, शायद दाराको बचा सकूँ। वे लोग उसे कत्ल करनेको लिये जा रहे हैं और मैं यहाँ औरतोंकी तरह, बच्चोंकी तरह लाचार हूँ! आँखोंके आगे यह सब देखकर भी खाता-पीता, सोता और अबतक जिन्दा हूँ। इसके लिए कुछ नहीं करता!—कूद पड़ूँ?

जहा०—यह क्या अब्बा! यहाँसे कूदनेपर यह तय है कि जान नहीं बच सकती।

शाह०—मर जाऊँगा तो उससे क्या! देखूँ अगर बचा सकूँ,—बचा सकूँ।

जहा०—अब्बा, आप क्या अपने आपेमें नहीं हैं? मरकर दाराकी जान कैसे बचा सकेंगे?

शाह०—ठीक है! ठीक है! मैं मरकर दाराको कैसे बचा सकूँगा? ठीक कहती है। फिर,—फिर,—अच्छा,—जरा तू यहाँ औरंगजेबको लिवा ला सकती है?

जहा०—नहीं अब्बा, वह नहीं आवेगा। नहीं तो मैं औरत होकर—भी एक मर्तबा उससे लड़कर देखती। उस दिन दरबारमें रूबरू खड़े होकर मैंने उसका मुकाबिला किया था, मगर कुछ कर नहीं सकी। इसी सबबसे उस दिनसे मेरे बाहर जाने आनेपर भी सख्त निगरानी रक्खी जाती है। नहीं तो, एक दफा उससे लड़ाई करके जरूर देखती?

शाह०—फाँदूँ,—कूद पड़ूँ? (कूदना चाहते हैं)

जहा०—अब्बा, आप ये क्या पागलोंकी-सी बातें कर रहे हैं!

शाह०—सच तो है! मैं क्या पागल हुआ जा रहा हूँ!—ना ना ना। मैं पागल न होऊँगा!—या खुदा! इस आजिज, बूढ़े निहायत लाचार शाह-

जहाँको देख । खुदा !—तुझे तरस नहीं आता ? बेटेने बापको कैद कर रक्खा है,—इतनी बेइन्साफी, इतना जुल्म, ऐसी कुदरती कानूनके खिलाफ वारदात तुम देख रहे हो ? देख सकते हो ?—मैंने ऐसा क्या गुनाह किया था कि खुद मेरा ही बेटा,—ओः!—

जहा०—एक मर्तबा इस वक्त अगर वह मेरे सामने आ जाता, तो !

(दाँत पीसती है)

शाह०—मुमताज ! तुम बड़ी खुशकिस्मत हो जो अपने बेटेकी ऐसी नालायक और सदमा पहुँचानेवाली करतूत देखनेको नहीं रहीं ! तुमने कोई बड़ा सवाब किया था, इसीसे तुम पहले चल दीं :—जहानारा !

जहा०—अब्बा !

शाह०—मैं तुझे दुआ देता हूँ—

जहा०—क्या अब्बा !

शाह०—कि तेरे औलाद न हो,—दुश्मनके भी औलाद न हो। (प्रस्थान)

(दूसरी ओरसे जहानाराका प्रस्थान)

छठा दृश्य

[औरंगज़ेब एक पत्र हाथमें लिये टहल रहा है]

औरंग०—यह दाराकी मौतकी सजाका हुक्मनामा है।—यह काजीका फैसला है !—मेरा कुसूर क्या है !—मैं लेकिन,—नहीं, क्यों,—यह फैसला ! फैसलेको क्यों रद करूँ ?—यह फैसला है ।

[दिलदारका प्रवेश]

दिल०—यह खून है !

औरंग०—(चौंककर) कौन !—दिलदार ! तुम इस वक्त यहाँ ?

दिल०—जहाँपनाह, मैं ठीक वक्तपर ठीक जगहपर हूँ । देख लीजिएगा । और अगर मैं यहाँपर न होता तो भी यह खून—

औरंग०—(भर्राई हुई आवाजमें) खून !—नहीं दिलदार, यह काजीका फैसला है !

दिल०—बादशाह सलामत, सच और साफ कहूँ ?

औरंग०—कहो।

दिल०—बादशाह सलामत, आप एकाएक काँप क्यों उठे!—आपकी आवाज़ एक सूखी हवाके झोंकेकी तरह क्यों निकली! क्यों जहाँपनाह! सच कहूँ?

औरंग०—दिलदार!

दिल०—सच बात कहूँ!—आप दाराकी मौत चाहते हैं।

औरंग०—मैं!

दिल०—हाँ आप!

औरंग०—लेकिन यह तो काज़ीका फैसला है!

दिल०—फैसला! जहाँपनाह, काज़ी लोग जब दाराके लिए मौतका हुक्म दे रहे थे, उस वक्त वे खुदाके मुँहकी तरफ नहीं देख रहे थे। उस वक्त वे जहाँपनाहके खुश चेहरेका खयाल कर रहे थे और जोरूको गहने गढ़ानेके मनसूबे गाँठ रहे थे। फैसला!—जहाँ मालिककी लाल लाल आँखें सामने अड़ी रहती हैं, वहाँ फैसला! जहाँपनाह सोच रहे हैं कि मैंने दुनियाको खूब चकमा दिया। लेकिन दुनियाने मन ही मन सब समझ लिया, सिर्फ खौफसे कुछ कहा नहीं। जोर करके आप इन्सानकी जबानको रोक सकते हैं, गला घोटकर उसे मार सकते हैं, लेकिन स्याहको सफेद नहीं कर सकते। दुनिया जानेगी, आगेके लोग जानेंगे कि फैसलेका जाल रचकर आपने दाराका खून किया है—अपने तख्तका और ताजका खतरा दूर करनेके लिए।

औरंग०—सचमुच!—दिलदार तुम सच कह रहे हो! तुमने आज दाराकी जान बचाई! तुमने मेरे बेटे मुहम्मदको मुझे लौटा दिया और आज मेरे भाई दाराको बचाया! जाओ—शायस्ताखाँको भेज दो।

(दिलदारका प्रस्थान)

औरंग०—दारा जिये। मुझे अगर उसके लिए तख्त देना पड़े; तो दूँगा। इतना बड़ा अजाब—जाने दो, यह मौतका हुक्मनामा फाड़ डालूँ—(फाड़ना चाहता है) नहीं, अभी नहीं, शायस्ताखाँके सामने इसे फाड़कर अपनी नेकीका सुबूत दूँगा।—वह लो, शायस्ताखाँ आ गये।

[शायस्ताखाँ और जिहनखाँका प्रवेश और कोर्निश करना]

औरंग०—शायस्ताखाँ, काजियोंने अपने फैसलेमें भाई दाराको मौतकी सजा दी है।

जिहन०—यही क्या वह हुक्मनामा है?—मुझे दीजिए खुदावन्द, मै अपने हाथसे यह हुक्म तामील कर लाऊँ। काफिरको अपने हाथसे मौतकी सजा देनेके लिए मेरे हाथोंमें खुजली आ रही है। मुझे—

औरंग०—लेकिन मैने दाराको मुआफी दे दी है।

शायस्ता०—यह क्या जहाँपनाह!—ऐसे दुश्मनको मुआफी!—अपने दुश्मनको मुआफी!

औरंग०—मै जानता हूँ। इसीसे तो उसे मुआफ करना मेरे लिए फख्र-की बात है।

शायस्ता०—जहाँपनाह, इस फख्रके खरीदनेमें आपको अपना तख्त तक बेचना पड़ेगा।

औरंग०—जिन हाथोंकी ताकतसे इस तख्तपर कब्जा किया है, उन्हीं हाथोंकी ताकतसे उसकी हिफाजत भी करूँगा।

शायस्ता०—जहाँपनाह, एक बड़ी भारी आफतको सिरपर बनाये रख कर जिन्दगी-भर सल्तनत करनी पड़ेगी। आप जानते हैं, सारी रिआया और फौज दिलसे दाराकी तरफदार है। उस दिन दाराकी हालत देखकर सब लोग बच्चोंकी तरह रो रहे थे और जहाँपनाहको गालियाँ दे रहे थे। अगर वे एक दफा भी मौका पावें—

औरंग०—कैसे?

शायस्ता०—जहाँपनाह आठों पहर कुछ दाराकी निगरानी न कर सकेंगे। जहाँपनाह किसी दिन सफरमें गये, और फौजके सिपाहियोंने मौका पाकर दाराको रिहा कर दिया—तो जहाँपनाह—समझे?

औरंग०—समझा।

शायस्ता०—इसके सिवा बूढ़े शाहंशाह भी दाराके तरफदार हैं और उन्हें सारी फौज मानती है अपने उस्तादकी तरह, चाहती है अपने बापकी तरह।

औरंग०—हूँ। (टहलना) न होगा तो यह तख्त दे दूँगा।

शायस्ता०—तो फिर इतनी मेहनत करके यह तख्त लेनेकी क्या जरूरत थी? बापको तख्तसे उतारकर, भाईको कैद करके—जहाँपनाह बहुत दूर

बढ़ आये हैं।

औरंग०—लेकिन—

जिहन०—खुदावन्द, दारा काफिर है। आप काफिरको मुआफ करेंगे? खुदावन्द, इस दीने इस्लामकी हिफाजतके लिए ही आप आज इस तख्तपर बैठे हैं—याद रखें। दीनकी इज्जत देखना आपका फर्ज है।

औरंग०—सच है जिहनखाँ, मैं अपनी बेइज्जती और अपने ऊपर जुल्म सह सकता हूँ। लेकिन दीने इस्लामकी तौहीन नहीं सह सकता। कसम खा चुका हूँ। दाराकी मौत ही उसके लायक सजा है। जिहनखाँ, लो यह मौतका हुक्मनामा।—ठहरो, दस्तखत कर दूँ। (हस्ताक्षर करता है)

जिहन०—दीजिए, जहाँपनाह, आज रातको ही दाराका कटा हुआ सिर लाकर जहाँपनाहको दिखाऊँगा—बाहर मेरा घोड़ा तैयार है।

औरंग०—आज ही!

शायस्ता०—(मृत्युदंडका आज्ञापत्र औरंगजेबके हाथसे लेकर) जितनी जल्दी बला टले, उतना ही अच्छा। (जिहनखाँको दंडपत्र देता है)

जिहन०—जहाँपनाह, तस्लीम। (जाना चाहता है)

औरंग०—ठहरो, देखूँ। (दंडकी आज्ञाको लेना, पढ़ना और फिर फेर देना) अच्छा जाओ!   (जिहनखाँका प्रस्थान)

(औरंगज़ेब फिर जिहनखाँकी ओर बढ़ता है, फिर लौटता है और दमभर सोचता है।)

औरंग०—ना, जरूरत नहीं है!—जिहनखाँ! जिहनखाँ! नहीं, चला गया। शायस्ताखाँ!

शायस्ता०—खुदावन्द!

औरंग०—मैंने यह क्या किया!

शायस्ता०—जहाँपनाहने समझदारीका ही काम किया।

औरंग०—खैर जाने दो।   (धीरे धीरे प्रस्थान)

शायस्ता०—औरंगज़ेब! क्या तुममें भी कुछ नेकी बदीकी तमीज है?

(प्रस्थान)

सातवाँ दृश्य

स्थान—खिजराबाद, एक साधारण घर

समय—रात

[सिपर एक पलंगपर सो रहा है । दारा अकेले जाग रहे हैं और उसकी सूरत देख रहे हैं ।]

दारा—सो रहा है—सिपर सो रहा है । नींद ! सब बेचैनियोंको दूर कर देनेवाली नींद ! मेरे सिपरके सब रंज भुलाये रह ।—मेरे बच्चेने सफरमें मेरे साथ सर्दी और गर्मीकी बड़ी बड़ी सख्तियाँ झेली हैं, उसे तू भर-सक दिलासा दे । मैं लाचार हूँ । औलादकी हिफाजत करना, खाना देना, कपड़े देना—बापका काम है । सो मैं कर नहीं सका ।—बेटा, तू भूखसे तड़पता था, मैं तुझे खानेको नहीं दे सका । प्याससे तेरा गला सूख रहा था, मैं तुझे पानी तक नहीं दे सका । सर्दीमें पहननेके लिए काफी कपड़े तक नहीं दे सका । मुझे खुद खानेको नहीं मिला, उससे मुझे कभी वैसा सदमा नहीं पहुँचा बेटे, जैसा तेरी तकलीफ, तेरी गरीबी, तेरी तौहीनीसे पहुँचा है । बच्चे मेरे लख्ते जिगर ! मैं आज तुझे देख रहा हूँ । मुझे जान पड़ता है, दुनियामें और कोई नहीं है—सिर्फ तू है और मैं हूँ । मुझे इतना दुख है । मैं आज कैदखानेमें कैद हूँ, तो तेरे चेहरेको देखकर मैं सब दुख भूल जाता हूँ ।

[दिलदारका प्रवेश]

दारा—कौन !—तुम !

दिल०—मैं—यह—क्या देख रहा हूँ !

दारा—तुम कौन हो ?

दिल०—मैं था पहले सुल्तान मुरादका मसखरा । अब हूँ बादशाह औरंगजेबका मुसाहिब ।

दारा—यहाँ किस मतलबसे आये हो ?

दिल०—मतलब कुछ नहीं, आपसे मुलाकात करने आया हूँ ।

दारा—क्यों ऐ नौजवान, मेरी हँसी उड़ानेके लिए ?—हँसो ।

दिल०—नहीं शाहजादे साहब, मैं हँसने नहीं आया । और अगर हँसने

भी आता तो आपकी हालत देखकर वह तानेकी हँसी गलकर आँसू बन जाती और जमीनपर टपटप टपकने लगती !—यह हाल ! शाहजादा दारा आज इस हालतमें !—(भर्राई हुई आवाजमें) या खुदा !

दारा—ऐ नौजवान, यह क्या ! तुम्हारी आँखोंसे आँसू गिर रहे हैं—रोते हो !—रोओ !

दिल०—नहीं, रोऊँगा नही ! यह बहुत ही ऊँचे दर्जेका नज्जारा (दृश्य) है !—एक पहाड़ टूटा-फूटा पड़ा है, एक समंदर सूख गया है, एक सूरज फीका पड़ गया है । सारे जहानमें एक तरफ पैदायश और दूसरी तरफ तबाही हो रही है । इस दुनियामें भी वही है । यह तबाही बड़ी भारी, पाक और फख्रकी चीज है ।

दारा—तुम एक दानिशमन्द (दार्शनिक जान पड़ते हो ।)

दिल०—नहीं शाहजादे साहब, मैं दानिशमन्द नहीं हूँ । मसखरा हूँ, मुसाहिब हो गया हूँ, अभी दानिशमन्दका दर्जा नहीं पा सका हूँ । अगर घास चरते चरते कभी कभी सिर उठाकर देख लेनेको दानिश कहते हों, तो मैं जरूर दानिशमन्द हूँ शाहजादे साहब,—बेवकूफ समझता है चिरागका जलना ही ठीक है, चिरागका बुझना ठीक नहीं है; दरख्तका उगना ही वाजिब है, सूख जाना गैरवाजिब है; इंसानको खुदासे आराम ही मिलना चाहिए, तकलीफ मिलना जुल्म है । लेकिन यह बात नहीं है; आराम और तकलीफ एक कानून-के दो पहलू हैं ।

दारा—ऐ नौजबान, मैं यह नहीं सोचता । तो भी—तकलीफमें कौन हँस सकता है ? मरना कौन चाहता है ? मैं मरना नहीं चाहता ।

दिल०—शाहजादे साहब, आपकी मौतकी सजाका हुक्म मैं आज मंसूख करा आया हूँ । आप कैदसे अगर रिहाई चाहते हैं तो आइए । मेरी पोशाक पहन लीजिए—चले जाइए । कोई शक नहीं करेगा । आइए, हम दोनों आपसमें कपड़े बदल लें ।

दारा—और उसके बाद तुम ?

दिल०—मैं मरना ही चाहता हूँ । मरनेमें मुझे बड़ा मजा मिलेगा । इस दुनियामें कोई मेरे लिए रंज करनेवाला नहीं है ।

दारा—तुम मरना चाहते हो ! ! !

दिल०—हाँ, मैं मरनेका एक अच्छा मौका ढूंढ़ रहा था ! शाहजादे साहब, मरना मुझे बहुत प्यारा है । आपने मुझपर आज कैसा भारी एहसान किया, यह मैं कह नहीं सकता—

दारा—क्यों ?

दिल०—मरनेका एक अच्छा मौका देकर आपने यह एहसान किया है ।—आइए !

दारा—या रहीम ! यही बहिश्त है ! और क्या !—नहीं ऐ नौजवान, मैं नहीं जाऊँगा ।

दिल०—क्यों शाहजादे साहब, क्या मरनेका ऐसा अच्छा मौका माँगनेपर भी मैं न पाऊँगा ? (पैर पकड़ता है)

दारा—मैं तुम्हें मरने नहीं दूंगा और खासकर इस बच्चेको छोड़कर मैं कहीं न जाऊँगा ।

[जिहनखांका प्रवेश]

जिहन०—और कहीं जाना न पड़ेगा । यह दाराके कत्लका हुक्म है ।

दिल०—यह क्या !

जिहन०—शाहजादे साहब, मरनेके लिए तैयार हो जाइए, जल्लाद मौजूद हैं ।

दिल०—तो बादशाहने राय बदल दी ?

जिह०—हाँ दिलदार, तुम इस वक्त मेहरबानी करके बाहर जाओ । हम लोग अपना काम करें ।

दारा—औरंगजेब इतनी बड़ी सल्तनतके एक कोनेमें साँस लेनेके लिए दो तीन हाथ जमीन भी नहीं दे सकता ? मैं इस तंग और गन्दे मकानमें हूँ, यह मैला चीथड़ा पहने हूँ, खानेको दो सूखी और जली रोटियाँ मिलती हैं । यह भी वह नहीं दे सकता ।

दिल०—जिहनखाँ, तुम आज ठहर जाओ, मैं बादशाहका दूसरा हुक्म लिये आता हूँ ।

जिहन०—नहीं दिलदार, बादशाहका यही हुक्म है कि आज ही रातको शाहजादेका कटा हुआ सिर उन्हें ले जाकर दिखाया जाय !

दारा—आज ही रातको ! इतनी जल्दी ! यह सिर उसे चाहिए ही ! नहीं तो उसे नींद न आयेगी !—इस सिरकी इतनी कीमतका हाल मुझे पहले मालूम नहीं था।

जिहन०—अगर आज ही रातको आपका सिर हम न ले जा सकेंगे तो खुद हमारी जान जायगी।

दारा—ओह जिहनखाँ, तो फिर तुम क्या कर सकते हो, लो मुझे मारो।—जब बादशाहका हुक्म है !—आज कौन बादशाह है, कौन रिआया है !—हँसते हो ! हँसो।

जिहन०—आप तैयार हैं ?

दारा—तैयार ही हूं और अगर मैं तैयार न भी होऊँ, तो उससे तुम लोगोंका क्या बिगड़ता है ? (दिलदारसे) एक दिन इसी जिहनखाँने हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाकर मुझसे जान बचानेके लिए कहा था और मैंने इसकी जान बचाई थी। आज—नसीब तेरा खेल !—खूब !

जिहन०—बादशाहका हुक्म ! काजियोंका फैसला ! शाहजादे साहब, मैं क्या कर सकता हूं !

दारा—बादशाहका हुक्म ! काजियोंका फैसला ! ठीक है, तुम क्या कर सकते हो !—(दिलदारसे) जाओ दोस्त, तुमसे मेरी यह पहली और आखिरी मुलाकात है।

दिल०—कुछ न हो सका। मैं आपकी जान नहीं बचा सका, शाहजादे साहब। जान पड़ता है, शायद यही उस रहीमकी मर्जी है। मैं कुछ समझ नहीं सकता लेकिन शायद इसका एक बड़ा भारी मतलब है। इसका एक बड़ा अंजाम है। नहीं तो इतनी बड़ी बेरहमी, इतना बड़ा गुनाह, क्या फिजूल चला जायगा ! शाहजादे साहब, आप जैसे आदमीकी कुर्बानीका मतलब जरूर है। वह मतलब क्या है, यह मैं समझ नहीं सकता। लेकिन मतलब जरूर है। खुशीके साथ खुदाका शुक्रिया अदा करते हुए आप अपनी जान दे दें।

दारा—जरूर ही। दुःख किस लिए ? एक दिन तो जाना होगा ही। कोई दो दिन पहले गया और कोई दो दिन पीछे। मैं तैयार हूँ। तुमसे विदा होता हूँ दोस्त, तुमसे अभी घड़ी-भरकी जान पहचान है। तुम कौन हो यह

भी नहीं जानता हूं। मगर तुम मेरे बहुत दिनोंके पुराने दोस्त हो !

दिल०—तो जाइए शाहजादे साहब, इस दुनियामें मेरी और आपकी यही आखिरी मुलाकात है।

दारा—अब मुझे मारो—जिहनखां !

जिहन०—जल्लाद !

[दो जल्लादोंका प्रवेश। जिहनखाका इशारा करना।]

दारा—जरा ठहरो। एक मर्तबा—सिपर ! सिपर—नहीं। क्यों नाहक पुकारा।

सिपर—(उठकर) अब्बा जान !—यह क्या ! ये कौन हैं अब्बा ! मुझे खौफ मालूम पड़ रहा है।

दारा—ये मुझे मारनेके लिए आये हैं। तुमसे आखिरी मुलाकात करनेके लिए ही मैंने तुमको जगा दिया है। अब मैं जाता हूँ बच्चे ! (गलेसे लगाना) अब जाओ। जिहनखाँ, शायद तुम इतने बड़े शैतान नहीं हो कि मेरे बेटेके आगे मुझे कत्ल करो। इसे दूसरे कमरेमें ले जाओ।

जिहन०—(एक जल्लादसे) इसे उस कमरेमें ले जा।

सिपर—(जल्लादके पकड़नेपर) नहीं, मैं नहीं जाऊंगा। मेरे अब्बाको मारोगे। क्यों मारोगे। (जल्लादके हाथसे अपनेको छुड़ाकर दाराके पास आकर) अब्बा, मैं तुम्हें छोड़कर न जाऊंगा।

(सिपर जोरसे दाराके पैरोंसे लिपट जाता है)

दारा—बच्चे, मुझसे लिपटकर क्या करेगा ! पकड़कर क्या तू मुझे बचा सकेगा ? जाओ बेटा, ये मुझे कत्ल करेंगे ! तुझसे देखा न जायगा।

(दोनों जल्लाद अपनी आँखोंके आँसू पोंछते हैं)

जिहन०—ले जाओ।

(जल्लाद सिपरको पकड़कर खींचता हुआ ले चलता है)

सिपर—(चिल्लाकर) नहीं, मैं नहीं जाऊंगा। मैं नहीं जाऊँगा। (हाथ छुड़ानेकी चेष्टा करता है)

दारा—ठहरो। मैं उसे समझाये देता हूं। फिर वह कुछ न कहेगा।—छोड़ दो।

(जल्लाद सिपरको छोड़ देता है और वह दाराके पास आकर खड़ा

होता है ।)

दारा—(सिपरका हाथ पकड़कर) सिपर !

सिपर—अब्बा !

दारा—सिपर, मेरे प्यारे बच्चे, मुझे जाने दे । अब तक तूने इतने दुःख-में भी मुझे नहीं छोड़ा ।—जाड़ेमें, धूपमें, भूख-प्यास और जागनेकी बेचैनीमें, जंगलों और रेगिस्तानोंके सफरमें तूने मुझे नहीं छोड़ा । मुसीबत और तक-लीफसे अंधा होकर मैं तेरी छातीमें छुरी मारनेको तैयार हुआ, तब भी तूने मुझे नहीं छोड़ा । सफरमें, जंगमें, कैदमें, जानकी तरह तू मेरे कलेजेसे लगा रहा—तूने मुझे नहीं छोड़ा । आज तेरा बेहरम बेदर्द बाप—(कण्ठावरोध हो जाता है । उसके बाद बड़े कष्टसे अपनेको सँभालकर भराई हुई आवाज़से) तेरा बेदर्द बाप आज तुझे छोड़े जा रहा है ।

सिपर—अब्बा, अम्मी गई—आप भी—   (रोता है)

दारा—क्या करूँ, कोई चारा नहीं है बेटा, मुझे आज मरना ही होगा । अपनी जिन्दगी छोड़नेका मुझे आज उतना सदमा नहीं है जितना तुझे छोड़नेका हो रहा है । (आँखें मूँद लेते हैं) जाओ बेटा, ये लोग मुझे कत्ल करेंगे । वह बड़ा ही खौफनाक नजारा होगा । उसे तुम न देख सकोगे ।

सिपर—अब्बा, मैं तुम्हें छोड़कर जाऊँ ?—मैं नहीं जाऊँगा ।

दारा—सिपर, कभी तुमने मेरी बात नहीं टाली !—कभी तो—(आँसू पोंछना) जाओ बेटा, मेरा यह आखिरी हुक्म—मेरा यह आखिरी कहना मानो । जाओ ।—मेरी बात नहीं सुनोगे ? सिपर बेटा, जाओ ।

(सिपर सिर झुकाकर जानेको तैयार होता है)

दारा—सिपर !   (सिपर लौटता है)

दारा—एक मर्तबा—आ—तुझे छातीसे लगा लूँ । (छातीसे लगाना) ओः—अब जाओ बेटा !

(मन्त्र-मुग्धकी तरह सिर झुकाये एक जल्लादके साथ सिपरका प्रस्थान)

दारा—(ऊपर देखकर, छातीपर हाथ रखकर) खुदा ! पहले जनममें मैंने कौन-सा ऐसा गुनाह किया था !—ओः !—जाने दो, हो गया ! जल्लाद, अपना काम कर ।

जिहन०—उस कमरेमें ले जाकर काम तमाम करके ले आओ । यहाँ

इसकी जरूरत नहीं है।

(दोनों जल्लादोंके साथ दाराका प्रस्थान)

जिहन०— अपनी जान बचानेवालेका कत्ल अपनी आँखोंसे नहीं देखा, अच्छा ही हुआ।—वह कुल्हाड़ेकी आवाज़—वह मरते वक्तकी आवाज़—

नेपथ्यमें—ओः ! ओः ! ओः !

जिहन०—लो सब तमाम हो गया !

सिपर—(कमरेके भीतरसे) अब्बा ! अब्बा! (दरवाजा तोड़नेकी चेष्टा करता है)

[दाराका कटा हुआ सिर लेकर जल्लादका प्रवेश]

जिहन०—दो, सिर मुझे दो। मैं इसे बादशाह सलामतके पास ले जाऊंगा।

(ठीक इसी समय द्वार तोड़कर "अब्बा ! अब्बा !" चिल्लाता हुआ सिपर प्रवेश करता है और पिताका कटा हुआ सिर देख मूर्छित होकर गिर पड़ता है।)

पाँचवाँ अंक

पहला दृश्य

स्थान—दिल्लीका दरबार

समय—तीसरा पहर

[तख़्त-ताऊस (मयूरसिंहासन) पर औरंगजेब बैठा है,
सामने मीरजुमला, शायस्ताखाँ, जसवन्तसिंह, जयसिंह,
दिलेरखाँ इत्यादि उपस्थित हैं]

औरंग०—मैंने वायदेके मुताबिक राजा साहबको गुजरातका सूबा दे दिया है।

जसवन्त०—उसके बदलेमें मैं जहाँपनाहको अपनी इच्छासे अपनी सेनाकी सहायता देने आया हूँ।

औरंग०—महाराज जसवन्तसिंह, औरंगजेब एक दफाके सिवा दुबारा किसीपर एतबार नहीं करता। लेकिन तो भी हम महाराज जयसिंहकी खातिर मारवाड़के राजाको बादशाहकी खैरख्वाह रिआया बननेका दोबारा मौका देंगे।

जयसिंह—जहाँपनाहकी मेहरबानी।

जसवन्त०—जहाँपनाह, मैं समझ गया हूँ कि छल कपटसे हो, या बल और शक्तिसे हो, जहाँपनाहने जब सिंहासनपर बैठकर साम्राज्यमें एक शान्ति स्थापित कर दी है, तब किसी तरह उस शान्तिको नष्ट करना पाप है।

औरंग०—राजा साहबके मुँहसे यह बात सुनकर मैं बहुत खुश हुआ। जान पड़ता है, हम शायद राजा साहबको अपने खैरख्वाहोंमें समझ सकते हैं।

जसवन्त०—निश्चय।

औरंग०—अच्छी बात है राजा साहब।—वजीरेआजम, सुल्तान शुजा इस वक्त अराकानके राजाकी पनाहमें हैं न?

मीर०—गुलाम उन्हें अराकानकी सरहद तक खदेड़कर पहुँचा आया है।

औरंग०—वजीरे आजम, हम आपकी दिलेरी और हिम्मतकी तारीफ करते हैं। सिपहसालार, तुम शाहजादे मुहम्मदको ग्वालियरके किलेमें कैद कर आये?

शायस्ता०—हाँ खुदावन्द!

औरंग०—बेचारा साहबजादा!—लेकिन दुनिया देख ले कि मैं सबसे एक-सा बर्ताव करता हूँ। मैं बेटे या दोस्तके साथ कोई रियायत नहीं करता।

जयसिंह—जहाँपनाह, इसमें क्या सन्देह है।

औरंग०—बदकिस्मत दाराकी मौतने हमारी सारी कामयाबीको फीका कर दिया है। लेकिन भाई बेटे जायँ, दीनकी तरक्की हो।—सिपहसालार, भाई मुराद ग्वालियरके किलेमें खैरियतसे है?

शायस्ता०—हाँ खुदावन्द!

औरंग०—नासमझ भाई! तुमने अपनी खतासे सल्तनत खो दी और मैं मक्के शरीफ जानेका सवाब न हासिल कर सका!—खुदाकी मर्जी।—दिलेरखाँ तुमने सुलेमानको किस तरह कैद किया?

दिलेर०—जहाँपनाह, श्रीनगरके राजा पृथ्वीसिंहने शाहजादे और उनकी फौजको अपने यहाँ पनाह देनेसे इन्कार कर दिया। तब शाहजादे हम लोगोंको

छोड़नेपर लाचार हुए। इसके बाद ही मुझे जहाँपनाहका परवाना मिला था। मैंने राजासे मुलाकात करके जहाँपनाहके हुक्मके मुताबिक कहा कि "शाहजादे सुलेमान बादशाहके भतीजे हैं; बादशाह उनको अपने लड़केसे बढ़कर चाहते हैं। अगर आप शाहजादेको बादशाहके हाथमें सौंप देंगे, तो आपकी ईमानदारी या धरममें बट्टा नहीं लगेगा।" श्रीनगरके राजाने पहले तो शाहजादेको मुझे देना नामंजूर कर दिया। लेकिन दूसरे ही दिन उन्होंने शाहजादेको अपने यहाँसे रुखसत कर दिया। सबब कुछ समझमें नहीं आया।

औरंग०—बदनसीब शाहजादा! उसके बाद?

दिलेर०—शाहजादे तिब्बतके लिए रवाना हुए। लेकिन रास्ता न मालूम होनेके सबब रात भर भटक कर सबेरे फिर श्रीनगरके किनारे आ गये। उसके बाद मय फौजके मैंने जाकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया। इसमें अगर मेरी कुछ खता हुई हो, तो खुदा मुझे मुआफ करे। मैं किसी खास आदमीका नौकर नहीं हूँ, मैं बादशाहका सिपहसालार हूँ। बादशाह सलामतके हुक्मकी तामील करनेके लिए मैं लाचार था।

औरंग०—खाँसाहब, उसे यहाँ ले आइए।

दिलेर०—जो हुक्म (प्रस्थान)

औरंग०—राजा साहब, जिहनखाँको क्या शहरके बाशिन्दोंने मिलकर मार डाला?

जयसिंह—हाँ खुदावन्द! सुना कि जिहनखाँकी रियाआने ही उसका खून कर डाला!

औरंग०—खुदाने गुनहगारको ठीक सजा दी।—वह लो, शाहजादा आ गया।

[शाहजादे सुलेमानके साथ दिलेरखाँका फिर प्रवेश]

औरंग०—आओ शाहजादे!—शाहजादे सुलेमान!—क्यों शाहजादे, सिर क्यों झुकाये हुए हो?

सुले०—बादशाह—(कहते कहते रुक गये)

औरंग०—कहो शाहजादे, क्या कहते थे, कहो! तुम्हें कुछ डर नहीं है। तुम्हारे अब्बाके मारनेकी जरूरत ही आ पड़ी थी। नहीं तो—

सुले०—जहाँपनाह, मैं आपसे कैफियत नहीं तलब करता। और फतह-

याव औरंगजेबको आज किसीके आगे कैफियत देनेकी जरूरत भी नहीं है। कौन इन्साफ करेगा? मुझे भी मार डालिए। जहाँपनाहकी छुरीमें काफी धार है, उसे जहरमें बुझानेकी क्या जरूरत है!

औरंग०—सुलेमान, हम तुम्हारी जान नहीं लेंगे। मगर—

सुले०—बादशाह सलामत, इस 'मगर' के माने मैं जानता हूँ कि आप मौतसे भी कड़ी और खौफनाक कोई बात करना चाहते हैं। बादशाहके दिलमें अगर एक बेरहमी और बेदर्दीका काम करनेका खयाल पैदा हो, तो दुश्मनके लिए उससे बढ़कर और खौफ नहीं। लेकिन अगर बेदर्दीके दो कामोंके करनेका खयाल पैदा हो जाय, तो मैं जानता हूँ कि उनमें जो बढ़कर बेदर्दीका काम होगा वही आप करेंगे। आपके बदला लेनेसे आपकी मेहरबानी ज्यादह खौफनाक है। फरमाइए बादशाह सलामत—'मगर'—

औरंग०—परेशान न होना शाहजादे!

सुले०—नहीं। और क्यों—ओः! इन्सान इतनी सहूलियतसे बातचीत कर सकता है, और साथ ही इतना बड़ा शैतान भी हो सकता है!

औरंग०—सुलेमान, हम तुम्हें सताना नहीं चाहते। तुम्हारी अगर कुछ ख्वाहिश हो, तो कहो। हम मेहरबानी करेंगे।

सुले०—मैं सिर्फ यही चाहता हूँ कि जहांपनाह हत्तुल-इमकान (भरसक) मुझे खूब सतायें। अपने बापके खूनीसे मैं रत्ती-भर भी मेहरबानी नहीं चाहता। बादशाह सलामत, सोचकर देखिए, आपने क्या किया है! अपने भाईको,—एक ही माके पेटकी औलाद, एक ही बापकी मुहब्बतकी नजरके नीचे पले हुए एक खून-मांस,—जिससे बढ़कर दुनियामें अपना सगा कोई नहीं,—उसी भाईको आपने मरवा डाला। जो बचपनके खेलोंका साथी, जवानीमें पढ़ने लिखने का मेहरबान साथी—जिसकी तरफ अगर कोई टेढ़ी आँखसे देखता तो वह देखना आपके कलेजेमें तीरकी तरह लगता—जिसे चोटसे बचानेके लिए आपको अपनी छाती आगे कर देनी वाजिब थी—उसे—उसे आपने कत्ल करवा डाला! और ऐसा भाई—आप कहते तो यह सल्तनत वह आपको एक मुट्ठी धूलकी तरह उठाकर दे सकते थे, उन्होंने आपसे कभी कोई बुरा बर्ताव या आपकी कोई बुराई नहीं की। उनकी खता यही थी कि सब लोग उन्हें चाहते थे—ऐसे भाईको आपने कत्ल करवा डाला। हश्रके दिन जब उनका

सामना होगा, तब क्या आप उनकी तरफ आँख उठाकर देख सकेंगे?—खूनी! जालिम!—शैतान! तुम्हारी मेहरबानी? तुम्हारी मेहरबानीको मैं नफरतसे लात मारता हूँ।

औरंग०—अच्छा तो वही हो। मैं तुम्हारे लिए मौतकी सजाका हुक्म देता हूँ।—ले जाओ। (सिंहासनसे उतरता है) अल्लाहका नाम लो सुलेमान।

[बालकके वेषमें तेजीसे जोहरत-उन्निसाका प्रवेश]

जोहरत—अल्लाहका नाम लो औरंगजेब! (बन्दूक तानकर गोली चलाना चाहती है।)

सुले०—यह कौन? जोहरत-उन्निसा!!! (जोहरतका हाथ पकड़ लेता है।)

जोहरत—छोड़ दो—छोड़ दो। कौन हो तुम? इस गुनहगारको मैं आज मार डालूँगी। छोड़ दो—छोड़ दो।

सुले०—यह क्या जोहरत! सब्र करो—खूनका एवज खून नहीं है। अजाबसे सवाबकी जड़ नहीं जमती। मैं चाहता, तो सामने लड़कर इसे मार डालता। लेकिन कत्ल—बड़ा भारी गुनाह है।

जोहरत—डरपोक नामर्द! बापके नालायक बेटा!—चले जाओ! मैं अपने बापके खूनका बदला लूँगी! छोड़ दो—यह—बना हुआ, लुटेरा खूनी—

(मूर्छित हो जाती है।)

औरंग०—ऐ दिलेर और नेक शाहजादे—जाओ, तुम्हें न मारूँगा। शायस्ताखाँ, इसे ग्वालियरके किलेमें ले जाओ।—और दाराकी बेटीको मेरे अब्बाके पास आगरेके किलेमें पहुँचा दो।

दूसरा दृश्य

स्थान—अराकानका राजमहल

समय—रात

[शुजा और पियारा]

शुजा—कौन जानता था कि तकदीर हमें खदेड़कर आखिर इस जंगली

अराकानके राजाकी पनाह लेनेको मजबूर करेगी ?

पियारा—और यही कौन जानता है कि यहाँसे खदेड़कर कहाँ ले जायगी ?

शुजा—जंगली राजाने क्या अफवाह उड़ा दी है, जानती हो ?

पियारा—क्या ? जरूर कोई अजीब बात होगी। जल्द बताओ, क्या अफवाह उड़ा दी है ? सुननेके लिए मेरी जान निकली जा रही है।

शुजा—उस पाजीने अफवाह उड़ा दी है कि मैं इन चालीस सवारोंको लेकर अराकान जीतने आया हूँ।

पियारा—तुम्हारा एतबार ही क्या ! मैंने सुना है, बख्तियार खिलजीने सिर्फ सत्रह सवारोंसे बंगाल फतह कर लिया था।

शुजा—गैरमुमकिन है। जरूर किसीने दुश्मनीसे ऐसे गप उड़ा दी है। मैं यकीन नहीं कर सकता।

पियारा—इससे क्या होता है !

शुजा—पियारा, राजाने क्या हुक्म दिया है, जानती हो ? राजाने हमें कल सवेरे चले जानेके लिए हुक्म दिया है।

पियारा—कहाँ ? जरूर उसने हमारे लिए किसी खूब अच्छी आबो-हवाकी जगहमें रहनेका बन्दोबस्त कर दिया होगा।

शुजा—पियारा, क्या तुम कभी भूलकर भी ऐसी सख्त वारदातोंकी दुनियामें कदम न रक्खोगी ? इसमें भी दिल्लगी !

पियारा—इसमें शायद दिल्लगीकी बात करना अच्छा नहीं। पर यह पहले ही कह देते।—अच्छा लो, मैं संजीदगी (गंभीरता) इख्तियार करती हूँ।

शुजा—हाँ, जी लगाकर सुनो। और एक बात सुनोगी ? अगर सुनोगी तो आँखें बाहर निकल आवेंगी, गुस्सेसे गला रुँध जायगा, रगोंसे आगकी चिनगारियाँ निकलने लगेंगी।

पियारा—अरे बाप रे !

शुजा—अच्छा कहता हूँ—सुनो।—वह पाजी हमें पनाह देनेकी कीमत क्या चाहता है, जानती हो ? वह तुम्हें चाहता है। क्या सन्नाटेमें आ गई !—अब करो दिल्लगी !

पियारा—जरूर। मेरी नजरमें राजाकी इज्जत बढ़ गई।—वह राजा बेशक समझदार है।

शुजा—पियारा, ऐसी बातें न करो। मैं पागल हो जाऊँगा। यह तुम्हारे नजदीक दिल्लगी हो सकती है, लेकिन मेरे नजदीक यह जिगरके टुकड़े टुकड़े कर देनेवाली तलवार है।—पियारा, तुम जानती हो, तुम मेरी कौन हो?

पियारा—जान पड़ता है, बीवी हूँ।

शुजा—नहीं। तुम मेरी सल्तनत, इज्जत, हशमत, सब कुछ, दीन दुनिया और आकबत भी हो! सल्तनत नहीं पाई—लेकिन अब तक कभी उसका खयाल नहीं हुआ।—आज हुआ।

पियारा—क्यों?

शुजा—जो मेरे लिए जीने मरनेका सवाल है, उसीको लेकर तुम दिल्लगी कर रही हो।

पियारा—नहीं, यह बहुत ज्यादती है। दूसरा ब्याह तो बहुत लोग करते हैं, लेकिन तुम्हारी तरह किसीकी बरबादी नहीं हुई होगी।

शुजा—नहीं। मैं समझ गया।—तुम सिर्फ मुँहसे दिल्लगी करती हो। लेकिन भीतर ही भीतर कुढ़ी मरी जाती हो। तुम्हारे मुँहमें हँसी और आँखोंमें आँसू हैं।

पियारा—जान लिया!—नहीं तो। किसने कहा कि मेरी आँखोंमें आँसू हैं? यह लो (आँखें पोंछती है), अब नहीं हैं।

शुजा—अब क्या करना चाहती हो?

पियारा—मुझे बेच डालो।

शुजा—पियारा, अगर तुम मुझे चाहती हो तो यह ज़हरभरी दिल्लगी रहने दो। सुनो, मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—मैं भी नहीं जानता।—औरंगज़ेबके पास जाऊँ?—नहीं। उससे मरना अच्छा। क्या, तुम तो कुछ कहती नहीं पियारा!

पियारा—सोचती हूँ।

शुजा—सोचो।

पियारा—(दमभर सोचकर) लेकिन लड़के लड़की?

शुजा—क्या?

पियारा—कुछ नहीं।

शुजा—मैं क्या करूँगा, जानती हो?

पियारा—ना।

शुजा—समझमें नहीं आता। खुदकुशी (आत्महत्या) करनेको जी चाहता है।—लेकिन तुमको छोड़कर मरा भी नहीं जाता।

पियारा—और अगर मैं भी साथ चलूँ?

शुजा—सुखसे मर सकता हूँ।—नहीं, मेरे लिए तुम क्यों मरोगी!

पियारा—ना। वही हो। कल सबेरे हम निकाले हुए न जायँगे, कल जंग होगी। इन चालीस सवारोंको लेकर ही इस राज्यपर हमला करो; हमला करके बहादुरोंकी तरह मरो। मैं तुम्हारे पास खड़ी होकर मरूँगी। और लड़की लड़के—उम्मेद है, वे अपनी इज्जत आप रखेंगे। क्या कहते हो?

शुजा—अच्छा—लेकिन उससे फायदा क्या होगा?

पियारा—इसके सिवा चारा क्या है। तुम्हारे जानेपर मुझे कौन बचाएगा? और तुम अबतक बहादुरोंकी तरह जिन्दा रहे हो, बहादुरोंकी ही तरह मरो। इस जंगली राजाको ऐसी गन्दी बात मुँहसे निकालनेकी काफी सजा दो।

शुजा—अच्छी बात है। तो कल हम दोनों पास-पास खड़े होकर मरेंगे।—पियारा, हमारी इस जिन्दगीके मिलनेकी यही आखिरी रात है! तो आज हँसो, बातें करो, गाओ—जिससे अब तक तुम मुझे छाये हुए—घेरे हुए रहती थीं!—एक मर्तबा, आखिरी मर्तबा देख लूँ, सुन लूँ! अपना सितार छेड़ो! गाओ—बहिश्त इस दुनियामें उतर आवे। सितारकी झनकार और तानसे आसमानको गुँजा दो। अपने हुस्नसे एक दफा इस अँधेरेको दबा दो। अपनी मुहब्बतसे मुझे ढँक लो। ठहरो, मैं अपने सवारोंसे कह आऊँ। आज रातभर न सोऊँगा।

पियारा—मौत!—वही हो! मौत—जहाँ इस दुनियाकी सब उम्मीदों और ख़्वाहिशोंका खातमा है, सुख-दुखका अन्त है; मौत—जो गहरी नींद यहाँ खुलती नहीं, जिस अँधेरेमें कभी सबेरा नहीं होता, जो बेहोशी और खामोशी कभी जाती नहीं। मौत!—बुरी क्या है, एक दिन तो होगी ही। तो दिन रहते ही हाथ-पैर चलते ही—मरना अच्छा। आज यह रूप, बुझते

हुए चिरागकी लौकी तरह, उजली चमकसे जल उठे; यह गाना बलन्द आवाज़से आसमानपर चढ़कर सितारोंकी दुनियाको लूट ले; आराम आजका आफ़तकी तरह हिल उठे; खुशी दुखकी तरह रो उठे, सारी जिन्दगी एक प्यारके बोसेमें खत्म हो जाय।—आज हमारे ऐशकी आखिरी रात है।

(प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—आगरेका शाही किला

समय—रात

[बाहर आँधी, पानी और बिजली। शाहजहाँ और जोहरतउन्निसा]

शाह०—किसकी मजाल है कि दाराका खून करे? मैं बादशाह शाहजहाँ खुद उसका पहरा दे रहा हूँ। किसकी मजाल है?—औरंगज़ेब?—नाचीज़ है!—मैं अगर आँखें लाल करूँ, तो औरंगज़ेब डरसे काँप उठेगा! मैं अगर कहूँ आँधी उठे, तो आँधी उठेगी, अगर कहूँ बिजली गिरे, तो बिजली गिरेगी। (बादल गरजता है।)

जोहरत—ओः कैसा बादल गरज रहा है। बाहर जमीन-आसमान हवा पानी वग़ैरहमें जंग छिड़नेसे हलचल मची हुई है और भीतर इन आधे पागल बाबाजानके दिलमें भी वैसी हलचल मची हुई है! (मेघका गरजना) ओः फिर!

शाह—हथियार लो, हथियार लो! तलवार, भाला, तीर, कमान लेकर दौड़ो! वे आ रहे हैं, वे आ रहे हैं!—लड़ूँगा। जंगी बाजे बजाओ। झंडा खड़ा करो! वे आ रहे हैं।—दूर हो, खूनके प्यासे शैतानके गुलाम!—मुझे नहीं पहचानता! मैं बादशाह शाहजहाँ हूँ! हटकर खड़ा हो!

जोहरत—बाबाजान, जोशमें न आइए। चलिए आपको सुला आऊँ।

शाह०—ना। मेरे हटते ही वे दाराको मार डालेंगे।—पास न आना। खबरदार—

जोहरत०—बाबाजान !

शाह०—पास न आना। तुम लोगोंकी साँसमें जहर है,—वह साँस बँधे हुए गंदे पानीकी हवासे भी बढ़कर जहरीली है, सड़ी हड्डीसे भी बढ़कर बदबूदार है ! कहता हूँ, आगे कदम न बढ़ाना।

जोहरत—बाबाजान, रात ज्यादह बीत गई है। सोने चलिए।

[जहाँनाराका प्रवेश]

जहाँ०—कैसा पुरदर्द नजारा है ! बे-बापकी लड़की औलादके गममें पागल हुए बुड्ढेको तसल्ली दे रही है ! मगर उसके ही कलेजेमें धकधक करके आग जल रही है। कैसा पुरदर्द और पुरअसर नजारा है !—देख जाओ औरंग-जेब ! अपनी करतूत देख जाओ !

जोहरत—फूफी, तुम उठ क्यों आई ?

जहा०—बादलोंके गरजनेसे आँख खुल गई !—अब्बाजान फिर पागलोंकी तरह बक रहे हैं ?

जोहरत—हाँ फूफी।

जहा०—दवा दी है ?

जोहरत—दी है।—लेकिन, मालूम नहीं इस बार होश आनेमें देर क्यों हो रही है।

शाह०—किसने किया ! किसने किया !

जोहरत—क्या बाबाजान !

शाह०—खून ! खून ! वह खून निकल रहा है ! तमाम फर्श भीग गया।—देखूँ ! (दौड़कर दाराके कल्पित रुधिरको अपने दोनों हाथोंमें मलकर) अभीतक गर्म है,—धुआँ उठ रहा है।

जहा०—अब्बा, इतनी रात बीत गई, अभीतक आप नहीं सोये ?

शाह०—औरंगजेब ! मेरी तरफ देखकर हँस रहा है ? हँस !—नहीं पाजी ! तुझे सजा दूँगा ! खड़ा रह खूनी ! हाथ जोड़कर खड़ा हो !—क्या !—मुआफी माँगता है ? मुआफी !—मुआफी नहीं दी जा सकती। तूने सोचा था, मैं अपना लड़का समझकर तुझे मुआफ कर दूँगा ?—ना ! तुझे भूसी-की आगमें जलानेका हुक्म देता हूँ।—जाओ, ले जाओ।

जहा०—अब्बा, सोने चलिए।

जोहरत—आइए बाबाजान। (हाथ पकड़ती है)

शाह०—क्या मुमताज ! तुम उसकी तरफ़से मुआफी माँगती हो ! नहीं, मैं मुआफ़ नहीं करूँगा। मैंने उसे उसके जुर्मकी सजा दी है। उसने दाराका खून किया है।

जहा०—नहीं अब्बा, खून नहीं किया। चलकर सोइए।

शाह०—खून नहीं किया ? खून नहीं किया ?—सच, खून नहीं किया ? तो फिर यह मैंने क्या देखा ! ख्वाब ?

जहा०—हाँ अब्बा, ख्वाब।

शाह०—तब भी अच्छा है ! लेकिन यह बड़ा बुरा ख्वाब था। अगर सच हो !—क्यों जोहरत ! रो रही है !—तो क्या वह ख्वाब नहीं है ? ख्वाब नहीं है ? ओ-हो-हो-हो-हो-! (मेघका गरजना)

जोह०—यह क्या हो रहा है बाहर ! आजकी रात ही क्या कयामतकी रात है।—सब पागल हो उठे हैं,—पानी, आग, हवा, आसमान, जमीन,—सब पागल हो उठे हैं।—ओः कैसी खौफनाक रात है !

शाह०—यह सब क्या जहानारा ?

जहा०—अब्बा, रात ज्यादह हो गई है। सोइए। आप पागल तो हैं नहीं।

शाह०—नहीं, मैं पागल नहीं हूँ। समझ गया, समझ गया।—जहानारा, बाहर यह सब क्या हो रहा है ?

जहा०—बाहर एक कयामत हो रही है। वह सुनिए अब्बा जान,—बादल गरज रहा है ! वह सुनिए, —पानी जोरसे बरस रहा है ! वह सुनिए,—हवाकी हुमक ! बारबार बिजली चमक रही है। पानीका सोता मानो उमड़ चला है। आँधी उस पानीको जमीनपर तीरकी तरह पहुँचा रही है।

शाह०—करो पाजियो ! खूब ऊधम करो, खूब शैतानी करो। यह जमीन चुपचाप सब सह लेगी। इसने तुम्हें पैदा ही क्यों किया था !—इसने तुम्हें अपनी गोदमें पाल-पोसकर इतना बड़ा क्यों किया था ! तुम सयाने हुए हो, अब क्यों मानोगे ! —जिसने जैसा किया वैसा फल पाया। करो पाजियो ! क्या करेगी वह ? ढेरके ढेर आगके शोले उगलेगी ? उगले। वे

शोले आसमानमें जाकर दूने जोरसे उसीकी छातीपर पड़ेंगे और उसे जला देंगे। वह समंदरमें लहरें उठाकर गुस्सेसे फूल उठेगी ? फूल उठे। वे लहरें उसीकी छातीपर लंबी सांसोंकी तरह बेकार हो-होकर रह जायँगी। भीतर रुकी हुई भापसे (गर्मीसे) वह भूचालमें हिल उठेगी ? लेकिन डर नहीं है। उससे खुद उसीकी छाती फट जायगी, तुम्हारा वह कुछ न कर सकेगी।— अपाहिज बुढ़िया ! वह बेचारी क्या कर सकती है ? सिर्फ अनाज दे सकती है, पानी दे सकती है, फूल फल दे सकती है। और कुछ नहीं कर सकती। करो, उसके ऊपर जुल्म करो। उसकी छातीको सितमके कुल्हाड़ोंसे चीरते चले जाओ, वह कुछ न कर सकेगी !—करो पाजियो !—मैया ! एक दफा गरज उठ सकती हो मैया ? कयामतकी आवाजसे, सैकड़ो सूरजोंकी तरह जलकर, फटकर, चौ-चीर होकर इस खाली आसमानमें छिटक जा सकती हो मैया ? देखूँ, वे कहाँ रहते हैं ? (दाँत पीसता है)

जहा०—अब्बा, इस बेकार गुस्सेसे क्या होगा ! चलिए सोइए।

शाह०—सच बेटी,—बेकार है ! बेकार है ! बेकार है ! (मेघ-गर्जन)

जोहरत—ओः कैसी रात है फूफी ! ओः कैसी खौफनाक है !

शाह०—जी चाहता है जहानारा, इस रातकी आँधी पानी और अँधेरेमें एक बार खूब तेजीसे दौड़ूँ और ये सफेद बाल नोचकर, इस हवामें उड़ाकर, इस बरसातमें बहा दूँ। जी चाहता है कि अपनी छाती खोलकर बिजलीके आगे कर दूँ। जी चाहता है कि यहाँसे अपनी रूह निकालकर खुदाको दिखाऊँ। वह फिर गरज रहा है। बादल ! तुम बार बार क्यों बेकार गरज रहे हो ? अपनी चोटसे जमीनकी छातीके टुकड़े टुकड़े कर सकते हो ? अँधेरे ! कैसा अँधेरा है !—तू सूरज और तारोंको एकदम निगलकर नेस्तो नाबूद कर सकता है ?

जहा०—वह फिर !—

तीनों—ओः कैसी रात है !

चौथा दृश्य

स्थान—ग्वालियरका किला

समय—सवेरा

[सुलेमान और मुहम्मद]

सुले०—सुना मुहम्मद, फ़ैसलेमें चचाको मौतकी सजा दी गई है !

मुह०—फ़ैसलेमें नहीं भाई, फ़ैसलेका ढोंग रचकर। सिर्फ बाकी थे यही चचा, आज उनका भी खातमा हुआ।

सुले०—मुहम्मद, तुम्हारे ससुर सुल्तान शुजाकी मौत कैसे हुई ?

मुह०—ठीक मालूम नहीं। कोई कहता है, वे मय बीबीके दरियामें डूब गये। कोई कहता है, वे मय बीबीके लड़कर मरे और लड़की-लड़कोंने खुदकुशी (आत्महत्या) कर ली।

सुले०—तो उनके खान्दानमें कोई नहीं रह गया ?

मुह०—नहीं।

सुले०—तुम्हारी बीबीने सुना है ?

मुह०—सुना है। वह कल रात-भर रोती रही; सोई नहीं।

सुले०—मुहम्मद, तुम्हें इतना बड़ा रंज है, सह सकते हो ?

मुह०—और तुम्हें यह बड़ा आराम है ! माँ-बापसे मिलने निकले थे, मगर उनसे मुलाकात भी नहीं हुई।

सुले०—फिर उसी बातकी याद दिला रहे हो ! मुहम्मद, तुम इतने संग-दिल हो !—तुम्हारे अब्बाने क्या तुम्हें यहाँ मुझे इसी तरह जलानेके लिए भेजा है ? तुम्हें तो मुझे बहलाना और तसल्ली देना चाहिए।

मुह०—भाई साहब, अगर इस कलेजेका खून देनेसे तुम्हें कुछ भी तसल्ली हो, तो कहो मैं अभी छुरी भोंक लूँ !

सुले०—सच कहते हो मुहम्मद, इस रंजके लिए दिलासा है ही नहीं। अगर बिल्कुल भुला सकते हो, अगर गुजरे हुएको एकदम मिटा सकते हो, तो मिटा दो।

मुह०—क्या ऐसी कोई तरकीब नहीं है ? भाई साहब, क्या ऐसा कोई जहर नहीं है कि—

सुले०—वह देखो मुहम्मद,—सिपरको देखो।

[पुलके ऊपर सिपरका प्रवेश]

सुले०—वह देखो उस बच्चेको, मेरे छोटे भाई सिपरको देखो! देखो इस गूँगी बुत सूरतको! छातीके ऊपर दोनों हाथ बाँधे एकटक दूर सुनसानकी तरफ चुपचाप ताक रहा है! ऐसा खौफनाक और पुरदर्द नज्जारा कभी देखा है मुहम्मद?—इसको देखकर भी क्या तुम अपने रंजका खयाल कर सकते हो?

मुह०—ओः कैसा खौफनाक है!—सच कहा! हमारा रंज मुँहसे कहा जा सकता है लेकिन यह रंज तो बयान ही नहीं किया जा सकता। बच्चा जब रोता है, तब पास ही अगर किसीके कराहनेका शोर उठे, तो डरसे बच्चेका रोना थम जाता है। वैसे ही हमारा रंज इस रंजके आगे खौफसे चुप हो जाता है।

सुले०—उसे देखो, वह दोनों आँखें मूँदे दोनों हाथ मल रहा है। शायद बदमेंसे चिल्लाना चाहता है, मगर आवाज नहीं निकलती! सिपर! सिपर! भाई!

(एक बार सुलेमानकी तरफ देखकर सिपरका प्रस्थान)

मुह०—भाई साहब।

सुले०—मुहम्मद।

मुह०—मुझे मुआफ करो।

सुले०—तुमसे क्या खता हुई है भाई?

मुह०—नहीं भाई साहब, मुझे मुआफ करो। इतने गुनाहका बोझ अब्बा जान सँभाल नहीं सकेंगे। इसीसे आधा गुनाह मैं अपने सिर लेता हूँ। मैं बड़ा भारी गुनहगार हूँ। मुझे मुआफ करो। (घुटने टेक देता है)

सुले०—उठो भाई।—शरीफ नेक बहादुर। मैं तुम्हें मुआफ करूँगा? तुम जो सह रहे हो, वह अपनी खुशीसे ईमानके लिए। मैं ही सिर्फ बदनसीब हूँ।

मुह०—तो कहो कि मुझसे तुम्हें कुछ मलाल नहीं है और 'भाई' कह कर मुझे गलेसे लगा लो।

सुले०—मेरे भाई! (गले लगता है)

मुह०—वह देखो चचा जानको (मुरादको) लोग कत्लके लिए लिये जा रहे हैं!

[सुलेमान उधर देखता है। पुलके ऊपर पहरेके साथ मुरादका प्रवेश]

मुराद—(ऊँचे स्वरमें) या अल्लाह ! अपने गुनाहोंकी सजा मैं पा रहा हूँ, इसका मुझे रंज नहीं है। लेकिन औरंगजेब क्यों बच रहा है ?

नेपथ्यमें—कोई नहीं बचेगा। काँटेकी तौल बदला मिलेगा।

सुले०—यह किसकी आवाज़ है ?

मुह०—मेरी बीबीकी।

नेप०—उसको जो सजा मिलेगी, उसके आगे तुम्हारी यह सजा तो इनाम है।—कोई नहीं बचेगा। कोई नहीं बचेगा।

मुराद—(उल्लासके साथ) उसे भी सजा मिलेगी ? तो मुझे कत्लगाहमें ले चलो। मुझे अब कुछ रंज नहीं है। (पहरेके साथ मुरादका प्रस्थान)

सुले०—मुहम्मद, यह क्या ! तुम एकटक उधर ही ताक रहे हो ! क्या देखते हो ?

मुह०—दोजख। इसके सिवा, और भी क्या कोई दोजख है ? या खुदा वह कैसा होगा !

पाँचवाँ दृश्य

स्थान—औरंगज़ेबकी बाहरी बैठक

समय—आधी रात

[अकेले औरंगज़ेब]

औरंग०—जो किया—दीनके लिए। अगर और किसी तरह मुमकिन होता !—(बाहरकी तरफ देखकर) ओः कैसा अँधेरा है !—कौन जिम्मेदार है ? मैं ? यह फैसला है ! यह कैसी आवाज है ?—नहीं, हवाकी आहट है !—यह क्या ! किसी तरह इस खयालको दिलसे दूर ही नहीं कर सकता। रातको नींदकी खुमारीसे ढुलका पड़ता हूँ, मगर नींद नहीं आती ! (लंबी साँस लेता है) ओः ! कैसा सन्नाटा है ! इतना सन्नाटा क्यों है ! (टहलता है, फिर एकाएक खड़े होकर) वह क्या है ! फिर वही दाराका कटा हुआ सिर !—शुजाकी खूनसे तर लाश ! मुरादका धड़ !—जाओ सब ! मुझे यकीन नहीं ! अरे ये फिर वे ही लोग मुझे घेरकर नाच रहे हैं !—कौन हो तुम ? धुएँकी चमकदार चोटीकी तरह बीच बीचमें—जागते हुए भी सोतेकी-सी हालतमें

मुझे देख पड़ते हो !—चले जाओ !—वह मुरादका धड़ मुझे पुकार रहा है।
दाराका सिर मेरी तरफ एकटक ताक रहा है, शुजा हँस रहा है ।—यह सब
क्या है ! ओः—(आँखें बन्द कर लेना, फिर खोलना) जाने दो ! गया !
ओः !—बदनमें तेजीके साथ खून चक्कर मार रहा है। सिरपर मानो किसीने
पहाड़ लाद दिया है ।

[दिलदारका प्रवेश]

औरंग०—(चौंककर) दिलदार !

दिल०—जहाँपनाह !

औरंग०—यह सब मैंने क्या देखा !—जानते हो ?

दिल०—इन्साफके पर्देके ऊपर गर्म पछतावेकी परछाहीं !—तो शुरू
हो गया !

औरंग०—क्या ?

दिल०—पछतावा । जानता था कि जरूर ही होगा। इतने बड़े कुदरती
कानूनके खिलाफ काम,—कायदेका इतना बड़ा उलट-फेर—कुदरत क्या
बहुत दिनों तक सह सकती है !—कभी नहीं ।

औरंग०—दिलदार, कायदेका उलट-फेर क्या ?

दिल०—यही बूढ़े बापको नजरबंद रखना ! जानते हैं जहाँपनाह,
आपके अब्बा आज आपकी बेरहमी देखकर पागल हो गये हैं !—उसपर
एकके बाद एक भाइयोंका खून ! इतना बड़ा अजाब क्या यों ही चला
जायगा !

औरंग०—कौन कहता है मैंने भाइयोंका खून किया है ! यह काजियों-
का फैसला है !

दिल०—हमेशा औरोंको धोखा देते रहनेसे क्या जहाँपनाहको यह भी
यकीन हो गया है कि आप अपनेको भी धोखा दे सकते हैं ? यहीं सबसे
बढ़कर मुश्किल है । आप भाइयोंको गला घोंटकर मार सकते हैं; लेकिन
इन्साफको जल्दी गला घोंटकर न मार सकेंगे । हजार उसका गला घोंटिए,
तब भी उसकी धीमी, गहरी, ढँकी हुई, टूटी-फूटी आवाज,—दिलके भीतरसे
रह-रहकर सुनाई ही देगी। अब अपने ऐमालोंका नतीजा भोगिए ।

औरंग०—जाओ तुम यहाँसे। कौन हो तुम दिलदार, जो औरंगजेबको

नसीहत देने आये हो ?

दिल०—मैं कौन हूँ औरंगज़ेब ? मैं हूँ मिर्ज़ा मुहम्मद नियामतखाँ हाजी।

औरंग०—नियामतखाँ हाजी !—एशियाके सबसे बढ़कर मशहूर आकिल दानिशमन्द नियामत खाँ ?

दिल०—हाँ औरंगज़ेब, मैं वही नियामत हूँ। सुनो, मैं शाही मामलोंकी जानकारी हासिल करनेके लिए, इत्तिफ़ाकिया इस घरेलू झगड़ोंके चक्करमें आकर पड़ गया था। वही जानकारी हासिल करनेके लिए मैं नीच मसखरा बना, और एक बार एक मामूली चालाकीमें भी शरीक हुआ।—लेकिन जो जानकारी लेकर मैं आज यहाँसे जाता हूँ, जान पड़ता है, उसे न ले जाता तो अच्छा था !—औरंगज़ेब, क्या तुमने यह सोचा था कि मैं अब तक तुम्हारे रुपयोंके लिए तुम्हारी गुलामी कर रहा था ? इल्ममें इस वक्त भी वह शान है कि वह मगरूर दौलतके सिरपर लात मार देता है। बादशाह सलामत, मैं जाता हूँ। (जाना चाहता है)

औरंग०—जनाब !

दिल०—ना, तुम मुझे न लौटा सकोगे। औरंगज़ेब, मैं जाता हूँ, हाँ, एक बात कहे जाता हूँ। तुम सोचते हो, इस जिन्दगीकी बाजी तुमने जीत ली ?—नहीं, यह तुम्हारी जीत नहीं है औरंगज़ेब, यह तुम्हारी हार है। बड़े गुनाहकी बड़ी सजा होती है !—बर्बादी ! तनुज्जुली ! तुम जितनी अपनी तरक्की समझ रहे हो, सचमुच उतने ही नीचे गिरते जा रहे हो। उसके बाद, जब, यह जवानीका नशा उतर जायगा, जब धुँधली नज़रसे देखोगे कि अपने और बहिश्तके बीचमें तुमने कैसा गढ़ा खोद रक्खा है, तब तुम उधर देखकर काँप उठोगे। याद रक्खो ! (प्रस्थान)

(औरंगज़ेब सिर झुकाए दूसरी तरफसे जाता है)

छठा दृश्य

स्थान—आगरेका किला। शाही महलका बरामदा।

[जहानारा और जोहरत-उन्निसा बैठी बातें कर रही हैं]

समय—तीसरा पहर

जहा०—बेटी, जोहरत-उन्निसा, औरंगजेब जैसा देखनेमें सीधा, हँसमुख मीठी छुरी और कमीना आदमी तुमने और भी कहीं देखा है ?

जोहरत—ना। मुझे एक तरहका खौफ लगता है फूफी ! भीतर इतना बेरहम, बाहर इतना सीधा: भीतर इतना शहजोर, बाहर इतना बेचारा: भीतर इतना जहरीला और बाहर इतना मीठा !—यह भी मुमकिन है ? मुझे खौफ लगता है।

जहा०—लेकिन मेरे दिलमें उसके लिए एक तरहकी इज्जतका ख्याल पैदा होता है। ताज्जुबसे सन्नाटेमें आ जाती हूँ कि आदमी इस तरह हँस सकता है, और साथ ही साथ खूनी शेरकी तरह लालचभरी निगाहसे देख भी सकता है,—ऐसी नर्मी और सहूलियतसे बातें कर सकता है जब कि साथ ही साथ उसके भीतर ही भीतर हसदकी आग सुलग रही है; खुदाके आगे इस तरह हाथ जोड़ सकता है जब कि साथ ही दिलमें कोई शैतनतका नया मनसूबा गाठँ रहा होता है।—बलिहारी !

जोहरत—बाबा जानको इस तरह कैद कर रक्खा है, फिर भी सल्तनत-के कामोंमें उनकी राय माँग भेजता है ! उनके सामने ही एक एक करके उनके बेटोंका खून करता जाता है, फिर भी हर मर्तबा उनसे मुआफी भी माँगा करता है ! जैसे बड़ी भारी शर्म, बड़ा भारी लिहाज है ! अजीब आदमी है ! वह लो, बाबा जान आ रहे हैं।

[शाहजहाँका प्रवेश]

शाह०—देख, कैसा अपने आपको सजाया है मैंने। जहानारा, देख ! औरंगजेब कहीं इन जवाहरोंको चुरा न ले जाय, इसीसे मैं इन्हें पहने पहने घूमता हूँ। कैसा देख पड़ता हूँ ? (जोहरतसे) मुझसे शादी करनेका तेरा जी नहीं चाहता ?

जोहरन—फिर हवास जाता रहा। पागलपन बीच-बीचमें चाँद पर बादलकी तरह आ आकर चला जाता है।

शाह०—(सहसा गंभीर होकर) लेकिन खबरदार, ब्याह न करना। (नीचे स्वर) लड़का होगा तो तुझे कैद रक्खेगा, तेरे जेवर छीन लेगा। ब्याह न करना।

जहा०—देखती हो बेटी, यह पागलपन नहीं है। इसके साथ होश-हवास भी है। यह गोया 'शायरीमें रोना' है।

जोहरन—दुनियामें जितने पुरदर्द नज्जारे हैं, उनमें अक़्लमन्द पागलका ऐसा पुरदर्द नज्जारा शायद और नहीं है। एक खूबसूरत मूरत जैसे टूटकर बिखरी पड़ी हुई है।—ओः बड़ा ही पुरदर्द है!

(आँखोंपर आँचल रखकर प्रस्थान)

शाह०—मैं पागल नहीं हुआ हूं जहानारा, सँभालकर बातचीत कर सकता हूँ।—कोशिश करनेसे अपना मतलब समझा सकता हूँ।

जहा०—यह मैं जानती हूं अब्बा जान!

शाह०—लेकिन मेरा दिल टूट गया है! इतना बड़ा सदमा उठाकर भी जिन्दा हूँ, यही ताज्जुब है! दारा, शुजा, मुराद, सबको मार डाला!—और उनका कोई एक लड़का भी बदला लेनेके लिए नहीं रहा! सबको मार डाला।

[औरंगज़ेब का प्रवेश]

शाह०—यह कौन? (भय और विस्मयके भावसे) यह,—यह तो बादशाह है।

जहा०—(आश्चर्यसे) यह तो सचमुच ही औरंगज़ेब है!

औरंग०—अब्बा!

शाह०—मेरे हीरे-मोती लेने आया है? न दूंगा। अभी सबको लोहेकी मुँगरियोंसे चूर-चूर कर डालूंगा! (जाना चाहता है)

औरंग०—(सामने आकर) नहीं अब्बा, मैं हीरे-जवाहरात लेने नहीं आया।

जहा०—तो जान पड़ता है, बापको मारने आया है! अच्छा है, बापका खून ही क्यों बाकी रह जाय!—यह भी हो जाय।

शाह०—मारेगा—मेरा खून करेगा? कर औरंगज़ेब, मुझे कत्ल कर! —उसके बदलेमें ये सब जवाहरात मैं तुझे दूँगा; और,—और मरनेके वक्त

तुझे इस मेहरबानीके लिए दुआ देकर मरूँगा । ले,—मेरी जान ले ले ।

औरंग०—(एकाएक घुटने टेककर) मुझे इससे भी बढ़कर गुनहगार न बनाइए । अब्बा, मैं गुनहगार,—भारी गुनहगार हूँ । उसी गुनाहकी आगसे जलकर खाक हुआ जा रहा हूँ । देखिए अब्बा, यह ढीली देह, ये गढ़ोंमें धँसी हुई आँखें, ये सूखे ओठ, यह पीला और उतरा हुआ चेहरा; ये मेरी गवाही देंगे ।

शाह०—दुबला हो गया है । सचमुच, दुबला हो गया है ।

जहा०—औरंगजेब, दीवाचेकी (भूमिकाकी) जरूरत नहीं है ! यहाँ एक ऐसा आदमी मौजूद है जो तुमको खूब जानता है । कहो, कौन-सा नया शैतनतका मनसूबा गाँठकर आये हो ? कहो अब क्या चाहते हो ?

औरंग०—अब्बासे मुआफी ।

जहा०—मुआफी ! औरंगजेब, यह तो तुमने खूब नया ढंग निकाला !

औरंग०—मैं जानता हूँ, बहन, कि—

जहा०—चुप रहो ।

शाह०—कहने दे, जहानारा । कहो, क्या कहना चाहते हो औरंगजेब ?

औरंग०—और कुछ नहीं कहना चाहता, सिर्फ आपसे मुआफी चाहता हूँ ।—

जहानारा—(व्यंगकी हँसी हँसती है)

औरंग०—(एक बार जहानाराकी ओर देखकर शाहजहाँसे) अगर मेरी इस इल्तिजाको जालसाजी समझें, तो अब्बाजान, आइए मेरे साथ, मैं इसी दम महलका फाटक खोले देता हूँ और आपको आगरेके तख्तपर सबके सामने बैठाकर बादशाह मानकर आपकी ताजीम करता हूँ । यह मैं अपना ताज आपके पैरोंपर रक्खे देता हूँ ।

(मुकुट उतारकर शाहजहाँके पैरोंपर रख देता है)

शाह०—मेरा दिल पसीजा जाता है ।

औरंग०—मुझे मुआफ कीजिए अब्बा ! (दोनों पैर पकड़ता है)

शाह०—बेटा ! (औरंगजेबको उठाकर अपनी आँखें पोंछता है)

जहा०—औरंगजेब, यह तुमने अच्छा तमाशा किया !

शाह०—बोल नहीं जहानारा —मेरा बेटा मेरे पैर पकड़कर मुझसे मुआफी माँग रहा है ।—मैं क्या मुआफी दिये बिना रह सकता हूँ ? हायरे

बापका कलेजा ! इतनी देर तक तू क्या इसीके लिए आफत मचाये था ! घड़ी भरमें सारा गुस्सा गलकर पानी हो गया !

औरंग०—आइए अब्बा, आपको फिर आगरेके तख्तपर बैठाऊँ और खुद मक्के शरीफ जाकर अपने गुनाहोंका कफ़्फारा करनेकी कोशिश करूँ !

शाह०—ना, मै अब फिर बादशाह होकर तख्तपर नहीं बैठना चाहता। मेरे दिन पूरे हो आये हैं।—इस सल्तनतको तुम भोगो बेटा;—हीरे, जवाहरात और ताज तुम्हारे हैं—और मुआफी !—औरंगजेब—औरंगजेब, नहीं उन बातोंको इस वक्त याद न करूँगा। औरंगजेब, तेरे सब कुसूर मैने मुआफ कर दिये। (आँख बंद कर लेते हैं)

जहा०—अब्बा, दाराके खूनीको मुआफी !

शाह०—चुप जहानारा ! इस वक्त मेरे आराममें खलल न डाल। उन्हें तो अब पा नहीं सकता।—सात बरस सख्त तकलीफमें बिताये हैं, इतने दिनोंतक भीतरी आगसे जलता रहा हूँ। रंजमें पागल हो गया हूँ। देखती तो है, एक दिन तो खुश हो लेने दे। तू भी औरंगजेबको मुआफ कर दे बेटी।—औरंगजेब, जहानारासे मुआफी माँगो।

औरंगजेब—मुझे मुआफ करो बहन !

जहा०—तुझमें मुआफी माँगनेकी हिम्मत है !,—अब्बाकी तरह मै जईफ नहीं हुई। लुटेरोंके सरदार ! खूनी ! दगाबाज !

शाह०—जहानारा, यह भी तेरी ही तरह बे-माँका है,—तेरी ही तरह यतीम है ! मुआफ कर ! इसकी माँ अगर इस वक्त जिन्दा होती, तो वह क्या करती जहानारा ? अपनी औलादकी मुहब्बत इसकी माँ मेरे पास जमा कर गई है।—क्या जहानारा ! तू अब भी चुप है ? आँख उठाकर देख, इस शामके वक्त इस जमनाकी तरफ देख,—देख वह कैसी साफ है ! देख उस आसमानकी तरफ;—देख उसका रंग कैसा गहरा है ! देख इस चमनकी तरफ,—देख वह कैसा खूबसूरत है ! और देख यह पत्थर बने हुए मुहब्बतके आँसुओंका ढेर; यह जुदाईके सदमेकी हमेशा बनी रहनेवाली कहानी, यह खड़ा, चुप, बेदाग, सफेद महल। इस ताजमहलकी तरफ आँख उठाकर देख,—कैसा पुरदर्द है ! इन सबकी तरफ देख कर औरंगजेबको मुआफ कर,—और यह सोचनेकी कोशिश कर कि तू इस दुनियाको जितना खराब समझती है वह उतनी खराब नहीं है,—जहानारा।

जहा०—औरंगजेब, यहाँ तुम्हारी पूरी तौरसे जीत हुई।—अपने इस जईफ और लबेजान बापके कहनेसे मैंने तुम्हें मुआफ कर दिया। (दोनों हाथोंसे मुँह ढक लेती हैं)

(बेगसे जोहरत उन्निसाका प्रवेश)

जोहरत—लेकिन मैंने मुआफ नहीं किया खूनी! सारी दुनिया चाहे तुझे मुआफ कर दे, पर मैं मुआफ नहीं करूँगी। मैं तुझे बददुआ देती हूँ,—गुस्सेसे भरी हुई नागिनकी तरह गर्म साँस लेकर मैं तुझे बददुआ देती हूँ। इस बददुआकी वहशतनाक परछाहीं जैसे एक खौफकी तरह खाते-पीते सोते-जागते तेरे पीछे पीछे फिरे। सोतेमें उस बददुआका बोझ पहाड़की तरह तेरी छातीपर रक्खा रहे। उस बददुआकी खौफनाक आवाज़ तेरी खुशी और फतहयाबीके बाजोंमें बेसुरी होकर गूँजती रहे। तूने मेरे बापका खून करके जो सल्तनत हासिल की है, मैं बददुआ देती हूँ कि तू बहुत दिनोंतक जी और सल्तनत कर।—वही सल्तनत तेरे लिए काल हो। वह तुझे एक गुनाह-से दूसरे गहरे गुनाहके गढ़ेमें ढकेलती रहे। मरते वक्त तेरे इस जलते हुए सिरपर खुदाके रहमकी एक छींट न पड़े! (प्रस्थान)

(शाहजहाँ, औरंगजेब और जहाँनारा, तीनों सिर झुकाये चुप खड़े रहते हैं।)

[पर्दा गिरता है]

समाप्त